INTERNATIONAL MAGAZINE
RNI NO. 68884/96

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीअै एकु एकु वखाणीअै।।
आतम पसारा करण हारा प्रभ बिनां नहीं जाणीअै।।

आत्म मार्ग

30/-

July 2019

अमेरिका – गुरमति समागम

21 जून से 04 अगस्त 2019 तक

द्वारा: सन्त बाबा लखबीर सिंह जी

(वर्तमान मुखी, ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब)

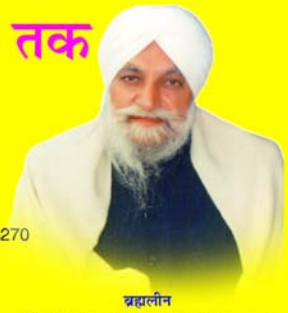

ब्रह्मलीन
श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज,
रतवाड़ा साहिब

—:कार्यक्रम:—

Date : **21 to 23 June**
Place : **Gurdwara Singh Sabha Carteret**
941 Port Reading Ave
Port Reading, NJ 07064
Contact : Parshotam Singh
+(856)220-6442

Date : **24 to 27 June**
Place : **North Carolina**
Sikh Association of the Triad
1001 Skeet Club Rd
High Point, NC 27265
Contact : Kuljit Singh : +1(336)681-4255

Date : **28 June**
Place : **Gurdwara Akaljot**
1401 W Campbell Rd. Grandland TX
Contact : Kamaldeep Kaur Gill : 9729791483

Date : **30 June**
Place : **Sikh Temple of North Texas**
506 Gatewood Rd Garland TX
Kamaldeep Kaur Gill : 9729791483

Date : **1 to 2 July**
Place : **Chicago**
Date : **3 to 5 July -**
Place : **Yuba City**
Smt. Gurjit Kaur : 1(530)755-7136

Date : **5 to 7 July**
Place : **Gurdwara Sahib, Fremont, CA 94536**
Hari Singh Babi : 1(408)425-1459

Date : **7 to 9 July**
Place Gurdwara Nanaksar
14525, Camp Ground
Delhi, CA 95315
Contact : Baba Balwinder Singh ji : 209-612-1313

Date : **10 to 11 July**
Gurdwara Guru Nanak Darbar
1301 S Verduga Road
Turlock CA-95380
Lachman Singh Tracy :
+1(209)650-9300

Date : **13 July**
Place : **Seattle**
Guru Nanak Sikh Temple
4919 61st St.NE, Marysville WA 98270
Harpinder Singh : +425-350-4307

Date : **13&14 July**
Place : **Gurdwara Singh Sabha**
5200 Talbot Road,
S Renton, WA 98055
Contact : Mandeep Singh : (206-883-3624)

Date : **14 July**
Place : **Sikh Centre of Seattle, 20412,**
Bothell, Everett Hwy
Bothell, WA 98012
Contact : Jarnail Singh : (206-228-5959)

Date : **15 to 17 July**
Gurdwara Sahib, 8100 Stine Rd
Bakersfield, CA 93313
Contact : Gurmej Singh : +1(661)436-0713

Date : **18 July**
Place : **LA (Los Angeles)**
Gurdwara Buena Park,
6911 Stanton Ace
Benadryl Park, CA 90621
Contact : Gurmej Singh +1(661)436-0713

Date : **19 to 20 July**
Place : **Sikh Gurdwara Riverside**
7940 Mission Boulevard #A,
Jurupa Valley, CA 92509
Contact : Gurmej Singh - +1(661)436-0713

Date : **21 July**
Gurdwara Singh Sabha Buena Par
7122 Orangethorpe Ave,
Buena Park, CA 90621
Contact : Gurmej Singh +1(661)436-07

Date : **22 to 24 July**
FRESNO
Jasbir Kaur + 1(818)207-1764

Date : **25 to 28 July**
3636 Gurdwara Ave,
San Jose, CA 95148
Amarjit Singh Dhanota,
+1(408)644-3820

-: Date :-
29 July to 4 Augest
Open
Contact for Booking :

Jaswinder Kaur
+1(408) 903-8978

Amarjit Singh Dhanota
+1(408)644-3820

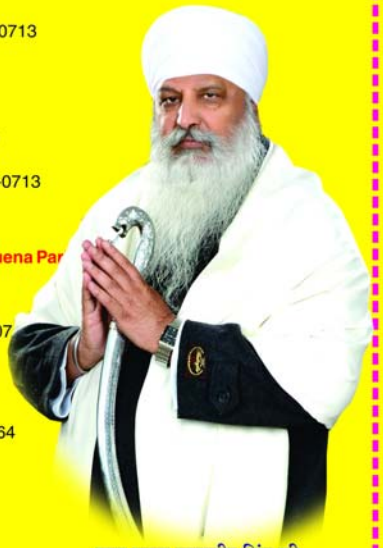

सन्त बाबा लखबीर सिंह जी
रतवाड़ा साहिब

आत्म मार्ग

वर्ष चौबीसवां - अंक छट्ठा, जुलाई 2019

गुरद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब

संचालक

श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज (ब्रह्मलीन)
तथा संत माता (बीजी) रणजीत कौर जी (ब्रह्मलीन)

चेयरमैन	एडिटर-इन-चीफ
सन्त बाबा लखबीर सिंह जी	सन्त बाबा हरपाल सिंह जी
प्रबन्ध सम्पादक	मुख्य सम्पादक
भाई (डा.) सुखविंदर सिंह	डा. जगजीत सिंह

मासिक पत्रिका न पहुँचने सम्बन्धी पूछताछ

यदि आपको माह की 15 तारीख तक आत्म मार्ग पत्रिका प्राप्त नहीं हो पाती है तो आप कृप्या निम्नलिखित सम्पर्क नम्बरों पर कार्यलय समय प्रातः 10.00 बजे से सायं 6.00 बजे तक सम्पर्क करने की कृपा करें -

सम्पर्क न. - **84378-12900, 94172-14391, 94172-14379**

Email : atammarg1@yahoo.co.in

Postal Address for any Enquiry, Money Order's :

'ATAM MARG' MAGAZINE
Gurdwara Ishar Parkash, Ratwara Sahib (New Chandigarh) P.O. Mullanpur Garibdas, Teh. Kharar, Distt. S.A.S. Nagar (MOHALI) - 140901, Pb. India

SUBSCRIPTION - शुल्क (देश)

वार्षिक	आजीवन सदस्यता	प्रति कापी
300/-	3000/-	30/-
320/-	3020/-	(For outstation cheques)

SUBSCRIPTION FOREIGN (विदेश)

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 £
Canada	80 Can $	800 Can $
Australia	80 Aus $	800 Aus $

प्रकाशन के समस्त अधिकार सुरक्षित हैं।

प्रकाशक, मुद्रक एवं सम्पादक सन्त बाबा हरपाल सिंह जी ने 'आत्म मार्ग' जै आफ सैट प्रिंटर्ज, 905 इन्डस्ट्रियल एरिया, फेज़-2, चण्डीगढ़ से छपवा कर मुख्य कार्यालय 'आत्म मार्ग' रतवाड़ा साहिब, डाकखाना मुल्लांपुर, तहसील खरड़, एस.ए.एस. नगर (मोहाली), पंजाब से प्रकाशित किया।

Please visit us on internet at :-
For Atam Marg Email : atammarg1@yahoo.co.in,
Website & Live video -

www.ratwarasahib.in
www.ratwarasahib.org } **(Every sunday)**

Email: sratwarasahib.in@gmail.com

विदेशों में आत्म मार्ग की शाखाएँ

अमेरिका - बाबा सतनाम सिंह अटवाल
फोन तथा फैक्स : 001-408-263-1844

कैनेडा - भाई सरमुख सिंह पंनू, वैनकूवर
फोन : 001-604-433-0408

भाई तरसेम सिंह बैंस - मोबाइल 001-604-862-9525
फोन : 001-604-288-5000

भाई जसबीर सिंह राणू - फोन : 001-604-589-9189

इंगलैंड - बीबी गुरबख्श कौर तथा भाई जगतार सिंह जग्गी
फोन:0044-121-200-2818 फैक्स :0044-121-200-2879,
भाई अरविंदर सिंह (राज) मोबाइल:0044-7968734058

आस्ट्रेलिया : बीबी जस्प्रीत कौर: मोबाइल-0061-406619858

रतवाड़ा साहिब की संस्थाओं के सम्पर्क नम्बर

* आत्म मार्ग मैगज़ीन (पंजाबी, हिन्दी तथा अंग्रेजी)
9417214391, 9417214379, 8437812900

* गुरू गोबिंद सिंह विद्या मन्दिर सीनियर सैकण्डरी स्कूल
(CBSE) - 0160-2255003

* माता साहिब कौर मुफ्त सिलाई सैंटर - **96461-01996**

* सन्त वरियाम सिंह मैमोरियल पब्लिक सीनियर सैकण्डरी स्कूल
(PSEB) अंग्रेजी माध्यम - **95920-55581**

* सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल (मुफ्त)
98786-95178, 92176-93845

* इंटरनैशनल डिवाइन स्कूल आफ़ नर्सिंग -
94172-14382

* इंटरनैशनल डिवाइन कालेज आफ़ ऐजूकेशन (बी. एड.)
94172-14382

* अकाल वृद्ध आश्रम (मुफ्त) **98157-28220**

विशेष जानकारी के लिए

श्री मान जी	-	98551-32009
श्री आखण्ड पाठ साहिब बुकिंग	-	94647-12900
आडियो-वीडियो लाईब्रेरी	-	98728-14385, 98555-28517
केवल टी.वी. नेटवर्क	-	94172-14385

अन्य सम्पर्क नम्बर
98889-10777, 96461-01996, 9417214381

विषय-सूची

1. सम्पादकीय 5
   भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह

2. बारहमाहा 7
   सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

3. गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ 10
   सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

4. बाबाणियाँ कहानियाँ 17
   सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

5. कितु बिधि मनु धीरे 23
   सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

6. बिनु भागा सतसंगु न लभै ...।। 33
   सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

7. नूरानी मिलाप - 12 37
   भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह

8. भाई नंद लाल जी 39
   डा. जगजीत सिंह

9. गुरू नानक आगमन 41
   डा. भाई बीर सिंह जी

10. गुरू नानक देव जी की प्रमुख रचना 'आसा दी वार' 44
    डा. जगजीत सिंह

11. गुरबाणी अर्थ भण्डार 48
    सन्त हरी सिंह जी 'रन्धावे वाले'

12. वारां भाई गुरदास जी 51
    डा. भाई बीर सिंह जी

13. स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार 53
    डा. स्वामी राम जी

14. विशेष जानकारी - बैंक खाता, आत्म मार्ग मैगजीन सदस्यता प्रारूप, अस्पताल जानकारी, तथा पुस्तक सूची 55

सम्पादकीय

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

मन रे किउ छूटहि बिनु पिआर ॥ ***अंग - 60***

सुसुन्दर जीवन जीने के लिए मनुष्य को गुरू द्वारा प्राप्त ज्ञान रूपी युक्तियों को अपनाने की अत्यन्त जरूरत है। इन युक्तियों में से जीने की प्रमुख युक्ति प्यार है। जहाँ प्यार नहीं है, वह जीवन रसयुक्त नहीं रह जाता है बल्कि वह शुष्क जीवन बन जाता है -

अति सुंदर कुलीन चतुर मुखि ङिआनी धनवंत ॥
मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत॥

अंग - 253

गुरवाणी के अनुसार प्यार से खाली हृदय उस लाश की भांति हो जाता है जिसमें से चेतन कला निकल चुकी हो और जिसे मृतक का दर्जा दिया जा चुका हो। मृतक प्राणी का शरीर जिस जगह पर पहुंचता है, उस जगह की निशानदेही भी गुरवाणी में से प्राप्त होती है। जैसे कि -

बिरहा बिरहा आखीअै बिरहा तू सुलतानु ॥
फरीदा जितु तनि बिरहु न उपजै सो तनु जाणु मसान॥

अंग - 1379

जहाँ पर परमात्मा के साथ प्यार नहीं है, परमात्मा द्वारा कुदरत के साथ प्यार नहीं है, वे शरीर तो श्मशान भूमि की भांति हैं। गुरवाणी के पावन फुरमान यह सिद्ध करते हैं कि प्यार वाला हृदय परमात्मा के द्वार पर स्वीकार्य होता है और प्यार विहीन हृदय तो उसे तनिक भी अच्छा नहीं लगता है।

प्यार, दृश्य और अदृश्य दोनों के साथ ही होता है। यह हृदय की भावना है। इसकी भाषा या बोली हृदय की है। हृदय की तरंगें सूक्ष्म हैं। सूक्ष्म तरंगों को एक जगह से दूसरी जगह पर पहुँचने के लिए किसी साधन की जरूरत नहीं है, बल्कि ये तो इस कार्य के लिए स्वयं ही समर्थ हैं। शरीर के लिए तो एक जगह से दूसरी जगह पर पहुँचने के लिए जरूरत है लेकिन हृदय की तरंगें साधन के बिना ही दूर या नजदीक यात्रा कर लेती हैं। जिसके पास ये तरंगें पहुँचती हैं, वह हृदय भी इनके प्रभाव कबूलता है। सांसारिक हृदय तो छोटे ही होते हैं जबकि गुरू का हृदय बहुत विशाल होता है। यदि हम यह कहें कि वह समुद्र जितना विशाल होता है, तब भी किसी असीम को सीमा में बाँधने वाली बात ही होगी। यदि अपने गुरू के प्रति किसी सिक्ख के हृदय में एक लहर उमड़ती है तो गुरू के हृदय में उसके प्रति प्यार वाली करोड़ों लहरें उमड़ती हैं। जैसे कि फुरमान है -

चरन सरन गुरु एक पैंडा जाइ चल,
सतिगुरु कोटि पैंडा आगे होइ लेत है।

कबित, भाई गुरदास जी

इस संसार को सच्चे की कोठड़ी समझते हुए, कादर को कुदरत में बिराजमान समझते हुए चहुँओर उस नूर का विस्तार ही महसूस करना है -

इहु जगु सचै की है कोठड़ी सचे का विचि वासु ॥

अंग - 463

बलिहारी कुदरति वसिआ ॥
तेरा अंतु न जाई लखिआ ॥ ***अंग - 469***

जब सारे विस्तार में वह परम शक्ति ही विद्यमान है तो प्रत्येक वस्तु को किया गया प्यार, उस परम निजत्व के साथ ही प्यार होगा क्योंकि वह परमात्मा स्वयं प्यार रूप होकर फैला हुआ है -

जत्र तत्र दिसा विसा हुइ फैलिओ अनुराग॥

जापु साहिब

विद्वानों के अनुसार जब यही प्यार अपने से छोटों के साथ किया जाएगा तो यह स्नेह बन जाता है, जैसे कि माँ का बच्चों के साथ प्रेम, अध्यापक का विद्यार्थियों के साथ प्रेम। जब यह प्रेम बराबर वालों के साथ होता है जैसे कि दोस्त का दोस्त के साथ, पति का पत्नी के साथ तो यही प्रेम बन जाता है तथा जब यही प्रेम अपने से बड़ों के साथ किया जाता है तो यह श्रद्धा बन जाती है जैसे कि विद्यार्थी का अपने अध्यापक के साथ या सिक्ख का अपने गुरू के साथ प्रेम। श्रद्धा को विज्ञान की जरूरत नहीं है। विज्ञान के

अन्दर तीनों 'क' का सिद्धान्त काम करता है यानि कि क्यों? कैसे? और कब? जबकि श्रद्धा में तीनों 'स' का सिद्धान्त काम करता है यानि कि सेवा, सिमरन और समर्पण। जब सिक्ख अपने गुरू पर श्रद्धा धारण करके समर्पण भावना से सेवा व सिमरन करता है तो वह स्वीकार्य हो जाता है -

आपु गवाइ सेवा करे ता किछु पाए मानु ॥

अंग - 474

सा सेवा कीती सफल है जितु सतिगुर का मनु मंने॥
जा सतिगुर का मनु मंनिआ ता पाप कसंमल भंने॥

अंग - 314

इस भावना से की गई सेवा गुरू के द्वार पर स्वीकार्य हो जाती है, जन्म-जन्मान्तरों के पाप समाप्त हो जाते हैं और मन निर्मल हो जाता है। निर्मल हृदय ही प्यार वाला हो सकता है। धर्म, श्रद्धा का विषय है। यदि धर्म के अन्दर श्रद्धा नहीं है तो वह धर्म किसी पड़ाव पर नहीं पहुँच सकता है। श्रद्धा के भी बहुत सारे पक्ष हैं। श्रद्धा का सर्वोत्तम पक्ष है अपने गुरू के वचनों पर शत प्रतिशत श्रद्धा धारण करके उन्हें अपने हृदय में बसाना। हृदय में बसाकर उनकी कमाई करनी तथा जीवन में ढालना। जैसे कि फुरमान है -

संतहु सागरु पारि उतरीऐ ॥
जे को बचनु कमावै संतन का
सो गुर परसादी तरीऐ ॥ *अंग - 747*

आपु सवारहि मै मिलहि मै मिलिआ सुखु होइ ॥
फरीदा जे तूं मेरा होइ रहहि सभु जगु तेरा होइ ॥

अंग - 1382

गुरमति में करनी प्रधान है, कथनी नहीं। प्रत्येक सिक्ख मिशनरी है और प्रत्येक सिक्ख ने श्वास-श्वास सीखते हुए अन्तिम श्वास तक सीखना है। इसी समर्पण भावना के लिए गुरू जी का वचन है -

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥
सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥
इतु मारगि पैरु धरीजै ॥
सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ *अंग - 1412*

इस भावना वाले को सच्चे पातशाह जी ने अपना रूप बनाया है। यथा -

खालसा मेरो रुप है खास।
खालसे महि हौं करहुं निवास।

यही एक बड़ा आदर्श है, जिसने विश्व को शान्ति प्रदान करनी है। जब प्रेम ऊँचाईयों को छूता है तो वह श्रद्धा कहलाता है लेकिन जब श्रद्धा अन्तिम पड़ाव पर पहुँचती है तो वह भक्ति में परिवर्तित हो जाती है, इसी भक्ति को गुरमति में स्वीकार्य किया गया है -

विणु गुण कीते भगति न होइ ॥ *अंग - 4*

भाई रे भगतिहीणु काहे जगि आइआ ॥
पूरे गुर की सेव न कीनी बिरथा जनमु गवाइआ ॥

अंग - 32

गुर सेवा ते भगति कमाई ॥
तब इह मानस देही पाई ॥
इस देही कउ सिमरहि देव ॥
सो देही भजु हरि की सेव ॥ *अंग - 1159*

जीवन का यही तो मनोरथ है, यही तो लाभ है, भक्ति का अर्थ है - भय + गति। परमात्मा या गुरू के भय व प्रेम में जीवन व्यतीत कनरा ही भक्ति है। इस भावना के साथ की गई भक्ति या बन्दगी ही परमात्मा को रुचिकर प्रतीत होती है। 'गोबिंद भाउ भगत दा भुखा।' भय तथा प्रेम के बिना की गई समस्त धार्मिक क्रियाएँ निरर्थक हैं।

कहा भयो जो दोउ लोचन मूंद कै,
बैठि रहिओ बक धिआन लगाइओ॥
नात फिरिओ लीओ सात समुंद्रनि,
लोक गइओ परलोक गवाइओ॥
बास कीओ बिखिआन सो बैठ कै,
अैसे ही अैसे सु बैस बिताइओ॥
साचु कहौं सुन लेहु सभै,
जिन प्रेम कीओ तिन ही प्रभ पाइओ॥
स्वये पातशाही 10

अत: आवश्यकता है अपने हृदय के अन्दर प्रेम व प्रीति को उत्पन्न करने की। जिज्ञासु के लिए, आत्म मार्ग के पथिक के लिए, यही तो रूहानी व्हीकल है। इसी साधन के माध्यम से तो गुरू के साथ अभेदता हो सकती है -

मन रे किउ छूटहि बिनु पिआर ॥ *अंग - 60*

आसाड़ु

(सावणि माह की संक्रान्ति - 16 जुलाई दिन वीरवार)

सन्त वरियाम सिंह जी
बानी वि. गु. रू. मिशन

सावणि सरसी कामणी चरन कमल सिउ पिआरु।
मनु तनु रता सच रंगि इको नामु अधारु।
बिखिआ रंग कूड़ाविआ दिसनि सभे छारु।
हरि अंम्रित बूंद सुहावणी मिलि साधू पीवणहारु।
वणु तिणु प्रभ संगि मउलिआ संग्रथ पुरख अपारु।
हरि मिलणै नो मनु लोचदा करमि मिलावणहारु।
जिनी सखीए प्रभु पाइआ हंउ तिन कै सद बलिहार।
नानक हरि जी मइआ करि सबदि सवारणहारु।
सावणु तिना सुहागणी जिन रामनामु उरि हारु॥

अंग - 134

आषाढ़ का महीना उनको तपता हुआ प्रतीत न हुआ जिन्होंने वाहिगुरू के चरणों का वास साक्षात रूप में प्रकट देखा, जैसे आषाढ़ के महीने आधा आषाढ़ निकलते ही घटायें उमड़ पड़ती हैं और बादल आसमान को ढक लेते हैं, ठण्डी पवनें चल पड़ती हैं, वर्षा होती हैं। नदियां, नाले उछल-उछल कर चलते हैं। जीव-जन्तु सुख की सांस लेते हैं और धरती पर हरियाली दृष्टिमान होने लगती है। सारी प्रकृति में वर्षा के मिलाप के कारण निखार आ जाता है। पर्वतों की चोटियां निर्मल हो जाती हैं, वृक्षों के मुरझाये हुए पत्ते, आन्धियों के कारण धूल धुसरित हुए धुल जाते हैं और निखर कर स्वच्छ हो जाते हैं। राहगीर आराम करने के लिए स्वच्छ हुए वृक्षों के नीचे बैठ कर आराम करते हैं। इस वातावरण का प्रभाव, इस निखार का दृश्य, मनुष्य के शरीर में एक अजीब सा प्रभाव डालता है। जेठ और आषाढ़ की तपस में यह परिवर्तन मनुष्य के अन्दर एक झन-झनाहट पैदा कर देता है और सावन शुरू होते ही सारा वातावरण बदल जाया करता है। पति के मिलाप में व्याकुल हुई सुहागिन इस ठंडक को महसूस करके प्यार के रस में लीन हो जाती है और प्रसन्नता उससे सम्भाली नहीं जाती, उसका रोम-रोम खिल उठता है - प्रसन्न हो जाता है; वह खिल उठती है।

सावणि सरसी कामणी चरन कमल सिउ पिआरु॥

अंग - 134

इस प्रकार प्रभु के प्यार में तड़प रहे प्रेमी, इस ठंडक को महसूस करते हैं। प्यार का आकर्षण उनके जीवन को किसी विशेष रंग में रंग देता है और नाम धुन इस प्यार में से गूंजती है और प्रभु को अन्तकरण की सेज पर आया हुआ महसूस करते हैं। इस सच्चे प्यार में मन और तन दोनों ही भीग जाते हैं और यह प्यार, यह नाम धुन उसके जीवन का आधार बन जाती है।

मनु तनु रता सच रंगि इको नामु अधारु॥ अंग - 134

इस जिज्ञासु का मन करता है कि अब मेरे से प्रभु एक क्षण भर के लिए भी जुदा न हो और मैं इस प्यार के रंग को अपने अन्तसकण की सेजों पर रखकर, जी भर कर आनन्द मनाऊँ। उसे प्रत्यक्ष रूप में माया के प्यार और वाहिगुरू जी के प्यार का अन्तर महसूस हो जाया करता है। माया के रंग सारे फीके हैं ये हल्के रंग के फूल (कुसुंभी) के समान

कच्चे रंग होते हैं। ये क्षण भर के लिए चढ़ते हैं और दूसरे क्षण उतर जाते हैं। पर वे सौभाग्यशाली हैं, जो नाम के रंग में रंगे हुए हैं। यह रंग कभी भी मैला नहीं होता और न ही उतरता है।

राम रंगु कदे उतरि न जाइ। गुरु पूरा जिसु देइ बुझाइ॥
अंग - 198

वे किस्मत वाले हैं, जिन्हें प्रभु का प्यार प्राप्त हो जाता है और उस प्यार को लूटते हैं। वह प्यार, एक बार आ गया फिर सारे शरीर के अन्दर, रसना में, श्वासों में, पसन्ती बाणी में, परा बाणी में, आज्ञा चक्र के अन्दर, त्रिकुटी में, सहंसरार दल कमल के अन्दर, दशम द्वार में, रोम-रोम में, कण-कण में समा जाता है। उसे फिर छोड़ा नहीं जाता। इस अमृत की कीमत दुनियां में कोई नहीं पा सकता।

लाल रंगु तिस कउ लगा जिस के वडभागा।
मैला कदे न होवई नह लागै दागा।
प्रभु पाइआ सुखदाईआ मिलिआ सुख भाइ।
सहजि समाना भीतरे छोडिआ नह जाइ।
जरा मरा नह विआपई फिरि दूखु न पाइआ।
पी अंम्रितु आघानिआ गुरि अमर कराइआ।
सो जानै जिनि चाखिआ हरि नामु अमोला।
कीमति कही न जाईऐ किआ कहि मुखि बोला।
अंग - 808

काइआ कापरु चीर बहु फारे
हरि रंगु न लहै सभाग॥ *अंग - 985*

यह रंग गहरा है, इस रंग में मस्ती है। यह प्यार जब नेत्रों में बसता है तो अपने प्रीतम के बिना कोई नज़र नहीं आता। यह बढ़ता ही जाता है -

सत संगति की रेणु मुखि लागी कीए सगल तीरथ मजनीठा।
कहु नानक रंगि चलूल भए है हरि रंगु न लहै मजीठा॥
अंग - 1212

आनन्दपुर साहिब में भयंकर युद्ध हो रहा है। आज के युद्ध की कमान मुगल फौजों के जरनैल, रोपड़ के पठान, मुगल खान के हाथ में है। उसने प्रण किया हुआ है कि आज गुरू गोबिंद सिंघ जी महाराज को या तो शहीद करना है या जिन्दा पकड़ कर ही वापिस आना है। नहीं तो मैदाने जंग में जूझ कर मर जाना है। सारा दिन बड़ा भयंकर युद्ध चलता रहा, रात हो गई। गुरू महाराज ने युद्ध का हाल पूछा। एक शिकायत हुई कि भाई घनईया मुगलों को अर्थात जो भी घायल होकर गिरता था, उसे पानी पिलाता था। घायल होश में आता और खड़ा होकर फिर युद्ध करने लग जाता। उसने मुगलों की फौज के घायलों को पानी पिलाया, पहाड़ियों की फौज के सिपाहियों को भी पानी पिलाया है। महाराज जी, उससे पूछताछ करनी चाहिये। महाराज जी ने भाई घनईये को बुलावाया जो अभी तक बहुत रात बीत जाने के बाद भी घायलों को ढूंढ-ढूंढ कर पानी पिला रहे थे। दैव योग से उसी मुगल जरनैल खान की दंदल तोड़ कर, उसका सिर अपनी जंघा पर रखकर, उसे पानी पिला रहा था। गुरू साहिब की हजूरी में आने पर उसे पूछा गया कि तू पानी किसको पिला रहा था? इस रंग में रंगे हुए प्रेमी के रोम-रोम में प्रभु प्यार की ठण्डी शीतलधारा बह रही थी। उसके नेत्रों की मैल, उस प्रीतम प्यारे ने धो दी थी। उसे संसार के विपरीत दिखाई देता था। उसने गुरू महाराज जी को कहा, ''पातशाह! मैं तेरे प्यार में पूरी तरह रंग गया हूँ, मुझे न तो कोई तुरक दिखाई देता है और न ही कोई अतुरक। जो कुछ दिखाई देता है वह तेरे प्यार से भरे नूर के दीदार होते हैं। मैं क्या करूं, मेरे अन्दर अब अपने पराये का भेद मिट गया है। तूने मेरे नेत्रों में प्रकाश करके, अपना ही रूप सब जगह दिखाना शुरू किया हुआ है।'' गुरू महाराज जी मुस्कराये, पट्टियां और मलहम की डिब्बी पकड़ा कर कहा, ''मेरे प्यारे रंग में लीन साजन! तू लाल रंग में रंगा हुआ है, अब तू मेरे जख्म साफ करके मलहम लगाना और पट्टियां भी बांधना।'' यह है अवस्था उन रंग में रंगे हुए प्रेमियों की, जिनके नेत्रों से माया का कुसुंभी रंग उतर चुका होता है। माया का रंग उन्हें विष से भरा हुआ प्रतीत होता है और कच्चा रंग होने के कारण राख से बढ़कर उसका मूल्य नहीं होता। उनके लिए मोतियों के मन्दिर, रतनों से जड़ित कस्तूरी की लपटें मारती सुगिन्ध, कोई महत्व नहीं रखती क्योंकि उन्होंने नाम के रंग का स्वाद चख लिया है, अनुभव कर लिया है। उन्हें पता है कि वास्तविक रंग प्रभु के प्यार का है।

हरि बिनु जीउ जलि बलि जाउ।
मै आपणा गुरु पूछि देखिआ अवरु नाही थाउ॥
अंग - 14

बिखिआ रंग कूड़ाविआ दिसनि सभे छारु॥
अंग - 134

काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध के विषय उसके मन पर रत्ती भर भी आकर्षण पैदा नहीं करते क्योंकि उन्हें सबसे उत्तम रस का ज्ञान हो गया है। दुनियां के झूठे तमाशों में नहीं फंसते। वे साधुओं की संगत, तत्तवेत्ता साधुओं की निकटता में रहते हैं। जहाँ से 'स्वाति बूंद' झरती है और जन्म-जन्मांतरों की मैल उतर जाती है। प्यास, भटकन बुझ जाती है।

हरि अंम्रित बूंद सुहावणी मिलि साधू पीवणहारु॥

अंग - 134

प्रभु कण-कण में दिखाई देने लग जाता है -

सो अंतरि सो बाहरि अनंत।
घटि घटि बिआपि रहिआ भगवंत।
धरनि माहि आकास पइआल।
सरब लोक पूरन प्रतिपाल।
बनि तिनि परबति है पारब्रहमु।
जैसी आगिआ तैसा करमु।
पउण पाणी बैसंतर माहि।
चारि कुंट दहदिसे समाहि।
तिस ते भिंन नही को ठाउ।
गुर प्रसादि नानक सुखु पाउ॥ *अंग - 293*

वणु तिणु प्रभ संगि मउलिआ संम्रथ पुरख अपारु॥

अंग - 134

वे धन्य हैं जिनके अन्दर प्रभु मिलाप की इच्छा जाग्रत हो गई है क्योंकि यह सावन का महीना मिलाप की इच्छा करता है। इसमें भादों के मौसम की तरह उमस नहीं होती। ठण्डी हवायें चलती हैं, वनस्पति प्रसन्न होती है, हर जगह अपना पूर्ण रूप, प्रत्यक्ष रूप दृष्टिगोचर होता है। प्रभु याद की झन्कारें अन्दर झनझनाती हुई महसूस होती हैं। वाहिगुरू की कृपा की इच्छा करता है।

हरि मिलणै नो मनु लोचदा करमि मिलावणहारु॥

अंग - 134

बलिहारे जाते हैं उन प्रभु प्रेमियों पर, जिन पर प्रभु की कृपा दृष्टि हो गई। जिनको मिलाप का रस प्राप्त हो गया।

जिनी सखीए प्रभु पाइआ हंउ तिन कै सद बलिहार॥

अंग - 134

कुर्बान जाते हैं उन प्रेमियों पर, जिन्होंने जीवन मनोरथ को प्राप्त कर लिया है और रसिया होकर अपने प्यारे के प्यार में विचर रहे हैं। जिन्हें शबद की प्राप्ति हो गई है, शबद के कारण ही वे संवर गये हैं।

नानक हरि जी मइआ करि सबदि सवारणहारु॥

अंग - 134

वह सुहागिने हैं, उन्होंने सुहाग का रस पूरी तरह से प्राप्त कर लिया है, जिनके हृदय में वाहिगुरू के नाम की धुन सदा ही गूंजती रहती है। रिम-झिम करके अमृत बरसाती रहती हैं और प्यार की घटायें उमड़-उमड़ कर आती हैं। यह सावन का महीना उन सुहागिनों को सदा ही सहाई बना रहता है -

सावणु जिना सुहागणी जिन रामनामु उरि हारु॥

अंग - 134

राम नाम का हार जिनके गले में सुशोभित नहीं हैं, वे अपने मनमत, खोखी विद्या की अग्नि और पदार्थों की इच्छा की लगन में जल कर राख बने रहते हैं और जीवन व्यर्थ गवाँ कर संसार से पश्चाताप करते हुए चले जाते हैं।

प्रार्थना करें कि हे मेरे प्यारे! मेरे अन्दर बाहर घट-घट में व्यापत, मेरे परम आपे, मुझे भी माया अग्नि में से बाहर खींच कर, इस पवित्र लाल रंग में रंग दे और अपने रसिक वैरागियों की संगत बख्श, जिससे मुझे भी सावन की फुहार की तरह, उस नाम फुहार का रस लेने का अवसर मिल सके। मैं रसिया होकर रंग में लीन हो जाऊँ, इस हउमै की बंधी सुरत से ऊपर उठकर आत्म रंग के हिलोरे लेने लगूं। इन्तज़ार करते-करते युग बीत गये। अब तेरा जलवा देखूं और देखता ही रहूं। मूसा जी ने कोसों दूर से तेरा जलवा देखा और तेरा ही बन गया।

हमारी गलतियों को मत देख, हम भूल-भुलैया में पड़ गये हैं; तू घट-घट में व्याप्त है। मैं अपनी हउमै की दीवार के कारण इस महान ठण्डे शीतल प्रकाश से वंचित रह जाता हूँ। मेरे अन्दर ही अन्धकार है, बाहर भी अन्धेरा है। मेरी आखों को मोतियां बिंद हो गया है। नेत्रों वाले बता रहे हैं, तेरा प्रकाश कण-कण में और तेरा नूर झलक मार रहा है, वे कहते हैं तेरे नेत्र अन्धे हैं, गुरू डाक्टर के पास जाना माल ले। उनका कहना है कि जिसको तू ढूंढ रहा है, वह तो तू स्वंय ही हूँ, मैं कैसे मानूं? तेरी 'मैं' ही इसमें पर्दा है, पर्दे से

(शेष पृष्ठ 22 पर)

गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

सतिनामु श्री वाहिगुरु,
धंन श्री गुरु नानक देव जीओ महाराज!

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ॥
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ ॥
अंग - 256

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ॥
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥
अंग - 289

धारना - प्रीतम मेरा पिआरा कोई आण के मिलावे।

कोई आणि मिलावै मेरा प्रीतमु पिआरा
हउ तिसु पहि आपु वेचाई ॥ 1 ॥
दरसनु हरि देखण कै ताई ॥
क्रिपा करहि ता सतिगुरु मेलहि
हरि हरि नामु धिआई ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
जे सुखु देहि त तुझहि अराधी
दुखि भी तुझै धिआई ॥
जे भुख देहि त इत ही राजा
दुख विचि सूख मनाई॥
तनु मनु काटि काटि सभु अरपी
विचि अगनी आपु जलाई ॥ 4 ॥
पखा फेरी पाणी ढोवा जो देवहि सो खाई ॥
नानकु गरीबु ढहि पइआ दुआरै
हरि मेलि लैहु वडिआई ॥ अंग - 757

साधु संगत जी! ऊँचे स्वर में बोल श्री वाहिगुरू। अपनी चित्त वृत्तियों को एकाग्र करो। आप सभी दूर-दराज के क्षेत्रों से चलकर गुरू दरबार में पहुँचे हो, थोड़ी देर के लिए मन की वृत्तियों को व ख्यालों को रोककर गुरमति विचारों को श्रवण करो और उन्हें मानने का यत्न करो तथा हृदय में धारण करो। जब तुम ऐसे करोगे तो तुम्हारी यात्रा भी सफल होगी और मन वांछित फल भी तुम्हें प्राप्त हो जाएँगे।

मनुष्य जन्म बहुत ही कीमती है, यह अचानक से ही हमें प्राप्त नहीं हो गया है, बल्कि बहुत चक्कर काटने के बाद यह हमें प्राप्त हुआ है -

फिरत फिरत बहुते जुग हारिओ मानस देह लही॥
नानक कहत मिलन की बरीआ सिमरत कहा नही॥
अंग - 631

बहुत सारे युग फिरते-फिरते बीत गए हैं, पता नहीं हम कौन-कौन सी योनियों में भटकते रहे तब कहीं मनुष्य जन्म प्राप्त होता है। हमें यह जन्म इसलिए प्राप्त होता है कि -

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥ अंग - 12

गोबिन्द को मिलने की तुम्हारी यह बारी आ गई है। इसके अतिरिक्त तुम जिन निरर्थक कार्यों में लगे हुए हो, वे सब तो -

अवरि काज तेरै कितै न काम ॥
मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ॥ अंग - 12

वे सब तुम्हारे कार्य तो फिजूल हैं, वे किसी भी काम आने वाले नहीं हैं। जो तुम्हारी प्रारब्ध है, वह तुम्हारे मस्तिष्क में परमात्मा ने लिखकर ही भेजी हुई है, वह न तो कम होगी और न ही बढ़ेगी। हाँ यदि तुम बुरे कार्य करोगो तो वह कम अवश्य हो जाएगी। अच्छे कार्य करो, सत्संग करो, पुण्य-दान करो तो उसके द्वारा वह बढ़ जाया करती है। अतः प्रारब्ध के बारे में तनिक सी भी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। गुरू जी कह रहे हैं कि तुम्हारे द्वारा किए जाने वाले अन्य सभी कार्य निरर्थक हैं। वाहिगुरू जी को मिलने के अलावा तुम जो कुछ भी करते हो वे सब तुम्हें यहाँ पर तो मूल्यवान प्रतीत होते हैं लेकिन उनका कुछ भी मूल्य नहीं है। इसलिए तुम हिम्मत

करके सत्संग करो, भजन करने लगो तथा किसी गुरुमुख प्यारे से भजन करने का ढंग पूछो। महापुरुषों की संगत करो क्योंकि उनकी संगत के द्वारा तुम्हें कुछ ज्ञान होगा, तुम्हारे अन्दर कुछ प्रकाश होगा। दरअस्ल हमारे बहुत जन्म बीत चुके हैं। जब मनुष्य जन्म में हम आते हैं, तो पहले-पहले व्यक्ति छोटे-छोटे पुण्य करता है, चींटियों को तिल व चावल आदि डालता है, पशुओं की चरगाह के पास नमक के ढेले रख आता है, उनके लिए पानी पीने का प्रबन्ध कर देता है ताकि पशु व पक्षी अपनी प्यास को बुझा सकें। पक्षियों को दाना डाल देता है। इस प्रकार के दान पुण्य के काम करने से मनुष्य जन्म मिल जाया करता है, बशर्ते भावनायुक्त होकर करे। फिर दूसरा जन्म आ जाता है। दूसरे जन्म में इसके अन्दर परमात्मा के मिलाप की रुचि जाग जाती है क्योंकि कर्म, फल देने के लिए तैयार हो जाते हैं। जब कहीं इसे सत्संग के बारे में पता चलता है तो यह हिम्मत करके वहाँ पर पहुँचता है तथा वहाँ पर किए गए वचनों को अपने हृदय में धारण करने का प्रयत्न करता है और इस प्रकार करते-करते जन्म व्यतीत हो जाता है और परलोक सिधार जाता है। अब उसका तीसरा जन्म आ जाता है। इस जन्म में बचपन से ही अन्दर ऐसे ख्याल आने शुरू हो जाते हैं कि मैं भजन बन्दगी करूँ, गुरवाणी को पढ़ूँ। लेकिन फिर रह जाता है और अब चौथा जन्म शुरू हो जाता है, इस जन्म के अन्दर उसके मन में ऐसे ख्याल आने लगते हैं कि मैं महापुरुष की संगत करूँ यानि कि किसी महापुरुष के साथ मेरा सम्पर्क जुड़ जाए, उसके दिल में महापुरुषों के मिलाप के लिए अत्यन्त सघन आकर्षण उत्पन्न होने लग पड़ता है। समझ लो कि उसके तीन जन्म पहले के और चौथा जन्म यह चल रहा होता है। अब वह महापुरुषों के सम्पर्क में तो आ जाता है लेकिन अभी वह उनसे वास्तविक बात के बारे में बात नहीं करता है। नेक कार्य करता है, सेवा करता है, गुरवाणी पढ़ता है लेकिन अभी जन्म मरण का चक्र समाप्त नहीं हुआ है, इसके बाद वह पुनः मनुष्य बन जाता है। पाँचवें जन्म में आकर यह समझ पैदा होती है कि चलो गुरू धारण करें और गुरू से मन्त्र लेकर उसका जप करें उसकी साधना करें तथा सेवा कार्य करें। अब, जब किसी महात्मा के साथ सम्पर्क जुड़ गया है तो उस सम्पर्क में आगे बढ़ें न कि पीछे हटें। इस प्रकार से कितने ही जन्म बीत जाते हैं, तब कहीं जाकर ऐसी अवस्था आती है कि फिर ब्रह्ममुहुर्त में जागकर, दो-अढ़ाई घंटे बैठकर भजन करता है और रात को सोने से पहले भजन बन्दगी करता है तथा दिन-रात अपने हृदय में सत्य के विचारों को धारण करता है, किसी की निन्दा नहीं करता है, चुगली नहीं करता है, ईर्ष्या नहीं करता है, छल-कपट नहीं करता है, किसी के साथ धोखा नहीं करता है। इसका कारण यह है कि अब उसके अन्दर से मैल निकल चुकी है और वह थोड़ी सी ही रह गई है। अतः उस समय, इसके हृदय में यह उत्साह उत्पन्न होता है मैं संगत करूँ, महापुरुषों के दर्शन करूँ। सारे काम-काजों को छोड़कर अब वहाँ पर पहुँच जाता है, जहाँ कहीं भी सत्संग होता है। अतः यह सब पूर्वजन्म के कर्मों का फल हुआ करता है कोई यूँ ही अचानक ही सत्संग नहीं करने लग पड़ता है अपितु यह पिछले जन्मों के कर्मों के बल के फलस्वरूप सम्भव हो पाया करता है। व्यक्ति के जीविकोपार्जन का ढंग किसी भी तरह का हो, कर्मों का बल उसे सत्संग में खींच कर ले ही आता है।

इसी प्रकार से एक प्रेमीपुरुष राजस्थान में रहने वाला, हैदराबाद के नजदीक ही यहाँ 'सक्खर' से 125 कि.मी. दूर 'सेवान' गांव में एक लड़के का कसाइयों के घर जन्म हो गया और वह अपने पैतृक कार्य में लग गया। कसाइयों का काम होता है कि जानवरों को मारना और उनकी खाल को उतार कर एक तरफ रख देना तथा उनके माँस को काटकर बेचना। वे इस बात से पूर्णतः अनभिज्ञ होते हैं कि जिस जानवर को मैं मार रहा हूँ, इसका मुझे पाप भी लगेगा तथा मुझे इसका लेखा भी देना पड़ेगा। भले ही महापुरुष बार-बार बताते हैं कि ऐ भद्रपुरुष! सारे जीव परमात्मा के हैं, तुम उनके साथ धक्का मत करो, तुम्हें परमात्मा के पास जाकर जबाब देना पड़ेगा। यदि तुम इन्हें काट-काट कर खा रहे हो तो एक दिन ऐसा भी आएगा जिस समय तुम्हारे ये कर्म तुम्हें फल देने के लिए तैयार हो जाएंगे। फिर ये मनुष्य होंगे और तुम जानवर बने होगे। उस समय ये तुम्हें काट कर खाएँगे। इस सम्बन्ध में गुरवाणी में इस प्रकार से आता है -

धारना - गला कटावेंगा, पिआरिआ
खा के मास बेगाने।

कबीर खूबु खाना खीचरी जा महि अंम्रितु लोनु ॥
हेरा रोटी कारने गला कटावै कउनु ॥ अंग - 1375

कबीर साहिब कहते हैं कि जो हम सादा भोजन खाते हैं, वह बहुत अच्छा है लेकिन जब कोई बहुत अधिक स्वादिष्ट भोजन बना कर खाता है तो वह निश्चित रूप से बीमार होगा ही। कबीर जी कहते हैं कि जो तुम जानवरों को मारकर खाते हो ('हेरा' कहते हैं शिकार करने को) उनके माँस को स्वाद लगा लगाकर खाते हो, तुम्हारा वह कर्म यूँ ही जाने वाला नहीं है बल्कि तुम्हें उसका फल देना ही पड़ेगा। जिस प्रकार से तुमने उसे मारा है, ठीक उसी प्रकार से वह भी तुमसे बदला लेगा। अकालपुरुष का हुक्म ही ऐसा है, जिसके कारण तुम्हें उसका बदला देना ही पड़ेगा। इस प्रकार से उपर्युक्त प्रकार की आजीविका में रहने वाला व्यक्ति था 'सधना'। दूसरी तरफ उसके अन्दर अपने व्यवसाय के प्रति बहुत सारी ग्लानि भी थी यानि वैराग्य भी था। जिस समय वह संसार का हालचाल देखता है कि संसार तो चला ही जा रहा है, यह सब कुछ देखकर उसके मन में वैराग्य भाव उत्पन्न होता है जहाँ कहीं सत्संग होता है, तो वह वहाँ जाकर श्रवण करता है। उसके मन में शौक बढ़ता है। फिर वह सोचने लगता है कि मेरी आजीविका भी कितनी बुरी है। अब मैं जो बीज बो रहा हूँ, मुझे इनका फल तो भोगना ही पड़ेगा। उसके मन में ख्याल आता है कि मुझे किसी महात्मा को मिलना चाहिए ताकि मैं उससे प्रभु मिलाप के बारे में पूछकर भजन-बन्दगी करूँ। इस प्रकार से वह मन में ख्याल लिए हुए है कि एक बार किसी महात्मा के द्वारा किए जा रहे सत्संग में वह जाने का मन बना लेता है और वहाँ पर जाकर महात्मा के वचनों को हृदय में धारण कर लेता है। जिस समय वह सत्संग में जाकर बैठता है, तो उस समय महापुरुषों के मुखारविन्द से इस प्रकार के वचन उच्चरित हो रहे हैं -

धारना - पै जू अचिंता जाल,
इक दिन पै जाणा।

नह बारिक नह जोबनै नह बिरधी कछु बंधु ॥
ओह बेरा नह बूझीअै जउ आइ परै जम फंधु ॥

अंग - 257

वह महापुरुषों से वचन सुनता है, मन के अन्दर विचार चलते हैं कि ऐ मन! मुझे अभी भजन-बन्दगी करने के बारे में पता नहीं है, क्या मालूम 'काल' मुझे कब आकर अपना शिकार बना ले? अब काल या मृत्यु का क्या भरोसा है?

साधु संगत जी! काल का कोई भरोसा नहीं हुआ करता है। जब मैं यू.पी. में रहा करता था तो नानक मते से हम लोग गाड़ियों पर आ रहे थे और मेरे साथ नवाब नगर वाले पूरन सिंह भी थे। रास्ते में उतर कर हम लोग काफी देर तक खड़े रहे, उसके बाद विचार-विमर्श करते रहे क्योंकि वहाँ पर अमावस्या का सत्संग हुआ करता था। दूसरे दिन के लिए हम लोगों ने कार्यक्रम बनाया। वे कहने लगे कि मैं स्वयं ही आ जाऊँगा। मैंने कहा, अच्छा ठीक है, कहीं भूल ही न जाना। इसके बाद वे अपने घर चले गए। जब वे सोए हुए थे तो आधी रात के बाद उन्होंने अपने कमरे की लाइट जला दी। उनके भैया ने पूछा, क्या हुआ? उसने बताया कि पता नहीं मेरी बाँह दर्द कर रही है। भैया ने कहा, कोई बात नहीं हम लोग अस्पताल चलते हैं। वे कहने लगे, कोई बात नहीं, जब सूर्योदय होगा तो उस समय हम लोग अस्पताल चल पड़ेंगे। मैं तब तक **toilet** जाकर आता हूँ। वे **toilet** चले गए उनका भाई बाहर खड़ा था, वह कहने लगा जी मैं पानी दूं?

वे बोले हाँ, पहले वाला तो गिर गया है, इसलिए थोड़ा पानी दे दो।

उन दिनों में फ्लश वगैरह तो होती नहीं थी। अतः उनके भाई ने पानी दे दिया लेकिन पानी गिरा ही नहीं।

भाई ने आवाज दी कि आपने पानी नहीं गिराया?

अन्दर से कोई आवाज नहीं आई। जब उन्होंने दरवाजा खोला तो क्या देखते हैं कि दीवार के साथ पीठ लगी हुई है, लेकिन स्वयं, शरीर से जा चुका है, यानि कि इतना समय भी नहीं मिला कि वह इतना भर तो कह दे कि मैं जा रहा हूँ।

इसी प्रकार से वहाँ पर मेरे एक अन्य जानकार थे - कर्नल लाल सिंह। उनके साथ मैंने विचार विमर्श की और यू.पी. के अन्दर गुरमति का प्रचार करने का एक कार्यक्रम निर्धारित किया। उन्होंने कहा कि अपने लोग तीन दिन बाद पुनः मिलकर मीटिंग करेंगे तथा बड़े स्तर पर कार्यक्रम बनाएँगे। वे कहने लगे कि देखो धान की फसल आपके पास खूब हो जाती है और मेरे ऊपर भी गुरू जी ने बहुत कृपा की हुई है, अपने लोग दस-दस बोरियाँ धान की निकाला करें और जो ये भैया लोग रहते हैं, इनके गाँवों में जाकर चावल वगैरह का भोजन तैयार करके इन्हें खिलाया करो तथा

उन्हें गुरू नानक देव जी के सन्देश के बारे में कुछ बताया करो और यह बहुत ही बढ़िया योजना है।

अगला दिन मुझे सन्देश मिला कि कर्नल लाल सिंह जी बीमार हो गए। छः डाक्टर उनकी चिकित्सा हेतु तैनात थे, जिनमें से परिवार के डाक्टर भी थे। फिर वे उन्हें अस्पताल में ले गए तथा डाक्टरों की लाख कोशिशों के बाद भी उनका देहान्त हो गया, फलस्वरूप हम लोगों की वह योजना भी साकार न हो सकी।

अतः संसार का ऐसा ही सिलसिला है कि यदि कोई व्यक्ति यह कहे कि मैं अमुक कार्य कर लूँ, उसके बाद भजन बन्दगी करूँगा तो यह असम्भव है। जिस प्रकार से मछली पानी में तैरती घूम रही है, वह कभी ऊपर की तरफ जाती है, कभी नीचे की तरफ जाती है, कभी बाईं तरफ जाती है और कभी दाईं तरफ जाती है। वह अपनी मौज में घूमती रहती है लेकिन उसे यह नहीं पता होता है कि उधर शिकारी ने जाल भी डाल दिया है। फलस्वरूप वह जाल में फँस जाती है। गुरू जी कहते हैं कि इसी प्रकार से -

भाई रे इउ सिरि जाणहु कालु ॥
जिउ मछी तिउ माणसा पवै अचिंता जालु ॥

अंग - 55

यह जाल तो पड़ना ही पड़ना है और यह भी पता नहीं है कि किस समय यह जाल पड़ जाएगा -

दर घर महला सोहणे पके कोट हजार ॥
हसती घोड़े पाखरे लसकर लख अपार ॥
किस ही नालि न चलिआ खपि खपि मुइे असार॥

अंग - 63

यहाँ पर कोई भी चीज व्यक्ति से साथ नहीं जाती है, बेशक व्यक्ति खप-खप कर मर जाता है। इन्सान के अन्दर यह एक बहुत बड़ी अविद्या है कि वह इस संसार से जाने को, जानते हुए भी मानना नहीं चाहता है। उसे पता है कि यह हमेशा के लिए रहने की जगह नहीं है। गुरू जी ने बहुत बड़ी-बड़ी उम्रों वालों का जिक्र किया है। इस प्रकार से पढ़ लो -

एक शिव भए एक गए, एक फेर भए,
राम चंद्र क्रिशन के अवतार भी अनेक हैं॥
ब्रहमा अरु बिशन केते बेद औ पुरान केते,
सिंम्रिति समूहन कै हुइ हुइ बिताए हैं॥
मोनदी मदार केते असुनी कुमार केते
अंसा अवतार केते काल बस भए हैं॥
पीर औ पिकाँबर केते गने न परत एते
भूम ही ते होइकै फेरे भूम ही मिलए हैं॥

त्वप्रसादि कबित (अकाल उसतति)

चाहे कोई थोड़ी देर के लिए आया और चाहे ज्यादा देर के लिए आया है, संसार का जीवन एक सपने की भांति बीत जाता है। जो यहाँ से चला जाता है, वह लौट कर वापिस नहीं आता है, ऐसा वाहिगुरू जी का यह खेल है। उसकी जान पहचान तो कायम रहती है, लेकिन वह वापिस नहीं आता है। अतः इस सच्चाई को जानते हुए भी व्यक्ति इससे अनभिज्ञ ही बना रहता है, इस व्यक्ति को मृत्यु तो कभी याद आती ही नहीं है। गुरू जी फुरमान करते हैं कि -

कालु न आवै मूड़े चीति ॥ ***अंग - 267***

यह इतना मूर्ख है कि इसे इस बात का पता ही नहीं चलता है कि इसने यहाँ से चले जाना है। इसके बावजूद यह यहाँ पर रहने के लिए बहुत कुछ करता रहता है। बहुत योजनाएँ बनाता है कि मैंने यहाँ से नहीं जाना है, लेकिन साधु संगत जी! दोबारा इस संसार के साथ सम्बन्ध नहीं पड़ता है। आजतक तो दोबारा किसी का सम्बन्ध पड़ा नहीं है। यदि पड़ा भी है तो गुरू महाराज जी द्वारा किए गए फुरमान के माध्यम से हमें पता चल जाएगा किस प्रकार से हमारा सम्बन्ध पड़ जाएगा।

गुरू दसवें महाराज जी घोड़े पर सवार होकर चले जा रहे हैं। आपके साथ में अन्य घुड़सवार सिक्ख भी हैं। आप खेतों के बीच में चले जा रहे हैं। आपके बाईं तरफ एक तीतर बड़े तेजी से बोल रहा है। गुरू जी उसे देखकर मुस्कुराने लग पड़े और अचानक आपके मुखारविन्द से इस प्रकार के वचन उच्चरित होने लग पड़े -

धारना - भूमीआ भूमि उपरि नित लुझै।
छोडि चलै त्रिशना नहीं बुझै।

भूमीआ भूमि उपरि नित लुझै ॥
छोडि चलै त्रिसना नही बुझै ॥ ***अंग - 188***

काफी दूर तक महाराज जी इस पंक्ति को बार-बार पढ़ रहे हैं। साथ में जो सिक्ख चल रहे थे, उन्होंने पूछा,

महाराज जी! आप अचानक इस प्रकार से शबद क्यों पढ़ने लग पड़े? उधर वह तीतर जोर-जोर से बोलने लग पड़ा। आखिर महाराज जी घोड़े को रोककर खड़े हो गए। सिक्ख कहने लगे, महाराज जी! आपने जो गुरवाणी की पंक्तियाँ पढ़ी हैं, कृप्या हमें भी उनका मतलब समझाने की कृपा करें। महाराज जी बोले, प्रेमीजनो! यह जो तीतर बोल रहा है, आप लोग इसे सुन रहे हो? यह अपने लोगों को अपशब्द बोल रहा है कि तुम लोग मेरे खेत के बीच से क्यों जा रहे हो? यह तीतर पूर्वजन्म में यहाँ का छोटा सा राजा हुआ करता था और उसका अपना फार्म था। जब वह परलोक गमन कर गया तो उसके बाद यह तीतर की योनि में चला गया लेकिन इसका अहंभाव अभी भी पूर्ववत ही है। यदि कोई जीव दोबारा आता है तो वह जरूरी नहीं की मनुष्य ही बनकर आए, अतः यह अब तीतर बन कर आ गया है लेकिन इसके अन्दर अपनी जमीन का स्वामित्व अभी भी पूर्ववत् कायम है।

सन्त बाबा ईशर सिंह राड़ा साहिब वालों के मन में अत्यधिक वैराग्य भाव था, इतना वैराग्य शायद ही किसी सन्त महापुरुष के अन्दर होगा क्योंकि मैं उन्हें बचपन से ही देखता रहा हूँ। जब तक मैं उनसे मिला नहीं था, तब तक मेरे माता-पिता उनके पास जाया करते थे और वे आकर उनके वचन हमसे बताया करते थे। जब मेरी माता जी अपने मायके में जाया करते थे तो उनके रास्ते में राड़ा साहिब पड़ता था। फलस्वरूप वे उनके वचन सुना करते थे और आकर बतलाया करते थे कि वे बहुत भारी तपस्या कर रहे हैं।

एक बार आपने बतलाया कि हमने नौ साल धरती के साथ अपनी पीठ ही नहीं लगाई। बात को कह देना तो सरल है लेकिन यदि कोई नौ सालों तक इस प्रकार से करके देखे तो पता चलेगा। यानि कि वे प्रत्येक समय भजन बन्दगी में लीन रहते थे, दरअस्ल वे धुर दरगाह से ही तपस्वी बनकर आए थे और इसीलिए उनके ऊपर बहुत बड़ा दायित्व था, लेकिन वे हमारे लिए रोल माडल भी बनकर बताते थे कि इस प्रकार से भजन बन्दगी करनी चाहिए। कई दिनों के बाद आप एकाध रोटी ग्रहण किया करते थे। आखिर आपकी शारीरिक अवस्था इस प्रकार की हो गई कि डाक्टरों ने कह दिया कि इनके अन्दर केवल एक बोतल खून की रह गई है। यदि यह भी कम हो गई तो इनके शरीर का जीवित रह पाना मुश्किल हो जाएगा। अतः इतनी घोर तपस्या आपने की।

चार वर्ग फुट के गड्ढे के अन्दर आप बैठ जाते थे और रात भर ही बैठ कर तप करते रहते थे। अन्य बन्दगी करने वालों को भी आप इसी प्रकार से बैठाया करते थे यानि कि सोने का कोई इन्तजाम नहीं था। अब यदि किसी को अधिक नींद आती तो वह बैठे-बैठे ही सो लेता था। उसके बाद आपने थोड़े बड़े भोरे (भूमिगत कक्ष) बनवा लिए जो कि 8'X8' की लम्बाई व चौड़ाई वाले थे। उनके ऊपर धरती के साथ लगने वाले ही छप्पर डाल लिए और उनके बीच बैठकर आप भजन किया करते थे। सेवादार ने बताया कि महाराज जी! आज ब्रह्ममुहुर्त में एक साँप सीधा ही आपकी तरफ आया है। मैं पहरे के ऊपर खड़ा था। उस समय घास-फूस की ही खिड़की सी बनाकर दरवाजे पर लगाई होती थी। कहने लगा, महाराज जी! वह यहाँ पर सामने ही फन तानकर खड़ा रहा। यदि आपका हुक्म हो और वह आज फिर आ जाए तो उसे मार डाले?

महाराज जी ने कहा नहीं उसे मारना नहीं है, तुम लोग उसकी तरफ कोई ध्यान मत करो। वह किसी मतलब के लिए ही आता है। दूसरा, तीसरा, चौथा, पाँचवा, छठा और सात दिन गुजर गए वह नित्य प्रतिदिन उसी प्रकार से आकर और फन तानकर खड़ा हो जाता था। आठवें-नौवें दिन आपका हुजूरी सेवादार कहने लगा, महाराज जी! आज वह साँप आपकी कुटिया के पिछली तरफ छप्पर के साथ मुँह लगाकर लम्बा पड़ा हुआ है, वह हिलता डुलता भी नहीं है, हमने डंडे के साथ भी हिलाया लेकिन वह हिलता ही नहीं है।

महाराज जी बोले, प्रेमीपुरुष! वह परलोक गमन कर गया है। सारे पूछने लगे, महाराज जी! इसमें रहस्य की कौन सी बात है, कृप्या समझाने की कृपा करें?

आप कहने लगे, प्रेमीजनो! यह पूर्वजन्म में इस भूमि का स्वामी था। जिस समय गुरू छठे महाराज जी यहाँ आए तो उस समय यह अपने ठाठ-बाठ की मस्ती में गुरू जी से मिलने ही नहीं आया और गुरू जी के पास आकर उनके पलंग पर ही बैठने की कोशिश करता था। गुरू छठे महाराज जी वहाँ पर काफी देर तक रहे। सेवादार ने उन्हें काफी समझाया कि महापुरुषों की बराबरी नहीं किया करते हैं। ये

तो सच्चे पातशाह हैं जबकि तुम एक मामूली धनी व्यक्ति हो, चौधरी हो। उसने इस बात का गुस्सा किया और चला गया।

वह चौधरी अभिमानी बहुत था, इसीलिए उसे साँप की योनि मिल गई, अपने जीवन काल में इसने पाप कर्म भी बहुत किए थे, जिनका यह पाश्चाताप कर रहा था और आज स्वयं ही परलोक गमन कर गया।

अतः विनती करने से मेरा तात्पर्य यह है कि जो चला जाता है, वह वापिस लौट कर नहीं आता है। यदि आ भी गया और साँप बनकर आ गया तो उसका क्या लाभ है? क्या फिर उसे कोई जमीन-जायदाद दे देगा? फिर तो लोग उसे मारने के लिए दौड़ेंगे।

अतः इतना सब कुछ जानते हुए भी यह व्यक्ति दुनियादारी में फँसकर अपने जीवन को बरबाद करके लौट जाता है और सारे जीवन काल में यह भजन-बन्दगी करने के स्थान पर मेरा-मेरा करते व्यतीत कर जाता है।

गुरू नौवें महाराज जी फुरमान करते हैं कि ऐ प्रेमीजनो! भजन बन्दगी न करने का कारण केवल यही एक है कि यह व्यक्ति इस संसार से जाने को सत्य नहीं मानता है। यह यही सोचता रहता है कि मैंने तो हमेशा के लिए यहीं रहना है। इस महामूर्ख को काल के बारे में कभी भी ख्याल नहीं आता है जबकि यह शत प्रतिशत सत्य बात है और इसीलिए इसकी अध्यात्मिक उन्नति नहीं हो पाती है। गुरू जी फुरमान करते हैं कि -

धारना - नहीओं मरन पछाणदा,
झूठे लालच लग के बंदा।

चेतना है तउ चेत लै निसि दिनि मै प्रानी ॥
छिनु छिनु अउध बिहातु है
फूटै घट जिउ पानी ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
हरि गुन काहि न गावही मूरख अगिआना ॥
झूठै लालचि लागि कै नहि मरनु पछाना ॥ 1 ॥
अजहू कछु बिगरिओ नही जो प्रभ गुन गावै ॥
कहु नानक तिह भजन ते निरभै पदु पावै ॥2॥१॥

अंग - 726

गुरू जी कहते हैं कि सबसे बड़ा कारण यह है यह व्यक्ति संसार पर रहना ही सत्य मानता है और यहाँ से जाना मानता ही नहीं है। उसे यह नहीं पता है कि वाहिगुरू जी ने तो सब कुछ लिखा पड़ा है। बस संसार के अन्दर तो फालतू का शोरगुल चल रहा है।

अतः इस प्रकार के सत्संगों के अन्दर वह आता है और उनमें महात्मा इस तरफ सचेत करते हैं कि प्रेमीजनो! यह व्यक्ति एक तो नाम जपने के लिए संसार पर आया था और दूसरा यह पूरे गुरू की सेवा करके अपने जन्म को लेखे में लगाने के लिए आया था -

गुर सेवा ते भगति कमाई ॥
तब इह मानस देही पाई ॥ अंग - 1159

यदि यहाँ पर आकर उसने यह कार्य नहीं किया तो महाराज जी कहते हैं कि फिर उसके यहाँ पर आने का मतलब क्या है? यदि यह कहता है कि मैं तो पैसे कमाने के लिए आया हूँ तो फिर पैसा तो साथ में जाता ही नहीं है -

कबीर इहु तनु जाइगा सकहु त लेहु बहोरि ॥
नाँगे पावहु ते गए जिन के लाख करोरि ॥

अंग - 1365

यदि यह व्यक्ति कहे कि मैं तो शराबें पीने के लिए आया हूँ, नशों को पीने के लिए आया हूँ, फिर तो तुम अपने शरीर को ही खराब कर लोगे, दुखी होओगे, तुम्हारे सेल्स समाप्त हो जाएँगे और तुम रोगी हो जाओगे। यह भी कोई आने का मतलब है? यदि यह कहे कि मैं तो पढ़ाई-लिखाई करने के लिए आया हूँ तो गुरू जी कहते हैं कि यदि पढ़ाई करने के बाद भी तुम्हें तत्व वस्तु के बारे में पता ही नहीं चला तो फिर पढ़ाई-लिखाई का क्या लाभ है? तुम तो वैसे ही खप-खप कर संसार से जा रहे हो। यहाँ पर आना तो बस उसी का सफल है -

आइआ सफल ताहू को गनीऐ ॥
जासु रसन हरि हरि जसु भनीऐ ॥ अंग - 252

जिसकी जिह्वा में से चलते-फिरते प्रत्येक समय वाहिगुरू-वाहिगुरू निकलता रहता है, अन्य लोगों का तो यहाँ पर आने का कोई लाभ ही नहीं है। उनके ऊपर तो गुरू जी इस प्रकार का सवाल करते हैं -

धारना - काहे जग आए ने,
भगती तों हीणे जिहड़े।

जिनी अैसा हरि नामु न चेतिओ
से काहे जगि आए राम राजे ॥
इहु माणस जनमु दुलंभु है
नाम बिना बिरथा सभु जाए ॥
हुणि वतै हरि नामु न बीजिओ
अगै भुखा किआ खाए ॥
मनमुखा नो फिरि जनमु है
नानक हरि भाए ॥ *अंग - 450*

भाई रे भगतिहीणु काहे जगि आइआ ॥
पूरे गुर की सेव न कीनी बिरथा जनमु गवाइआ ॥
अंग - 32

अपने जन्म को व्यर्थ में गंवा कर इस संसार से चला गया और बना कुछ भी नहीं। इसलिए महाराज जी कहते हैं कि इस भवजल संसार से पार होने का एक ही तरीका है, उसे आप अपने हृदय में बसा लो -

धारना - पिआरे जी, संगत कर लै साधूआँ दी,
जे तैं भवजल बिखड़ा तरनैं।

एक ही तरीका है कि तत्व वेत्ता महापुरुषों की संगत प्राप्त हो जाए जो कि अत्यन्त दुर्लभ है। यह संगत मिल पानी बहुत मुश्किल हुआ करती है, इसमें पर्दा रह ही जाता है। पर्दा रहने के कारण बात बन नहीं पाया करती है। जिस प्रकार से कारें चलती हैं, गाड़ियाँ चलती हैं, यदि उनके कारब्यूरेटर में पतला सा कागज रख दिया जाए तो वह करंट को पास नहीं होने देता है। पीछे से तो करंट आता है लेकिन आगे पास नहीं हो पाता है। इसका कारण यह है कि बीच में पर्दा पड़ा हुआ है। वह कुदरती बात है। कल्युग के हमले होते हैं, अविद्या पड़ जाती है, पर्दा पड़ जाता है। यदि किसी महात्मा की संगत न मिल पाए तो ऐसा होना स्वाभाविक ही है। यदि कोई कहे कि मैं तो वैसे ही पार हो जाऊँगा तो यह नामुमकिन है -

मनहठि कितै उपाइ न छूटीअै
सिम्रिति सासत्र सोधहु जाइ ॥ *अंग - 65*

गुरू जी कहते हैं कि तुम पहले बड़े-बड़े ग्रन्थों को, स्मृतियों को, शास्त्रों व वेदों का सूक्ष्म अध्ययन करके देख लो कि जोर लगाने पर कोई छूट सकता है? छूटने का तो बस एक ही तरीका है -

मिलि संगति साधू उबरे गुर का सबदु कमाइ ॥
अंग - 65

यदि पूरे साधू की संगत मिल जाए तो फिर उसे मिल कर यह जीव पार हो सकता है, अन्यथा बहुत मुश्किल है। इस प्रकार के वचन 'सधना' सुनता है, उसका हृदय अत्यन्त सरल है, तर्क वाला नहीं है। जिस जगह से वाणी आती है, उस जगह पर उसकी सुरति चक्कर मारती है क्योंकि वह वास्तविक श्रोता है। चार प्रकार के श्रोता हुआ करते हैं। एक तो वे होते हैं जो सत्संग में तो आ जाते हैं लेकिन वहाँ पर आकर आँखें बन्द करके गर्दन नीची कर लेते हैं तथा अपनी ठोड़ी को अपनी छाती के साथ लगा लेते हैं तथा आराम से सो जाते हैं, उन्हें कुछ भी पता नहीं लगता है कि क्या कहा जा रहा है, इसे तुन्द्रा (नींद की एक किस्म) या ऊँघ कहते हैं। दूसरे श्रोता वे होते हैं जो कि देखने के लिए आते हैं कि अमुक कीर्तनकार का कीर्तन कैसा है और अमुक का कैसा है। इस प्रकार के श्रोताओं को 'सूँघे' कहते हैं, वे केवल निर्णायक बनकर ही आते हैं। तीसरे प्रकार के श्रोता वे होते हैं जिनका मन सत्संग में नहीं लगता है, वे कभी मत्था टेकने वाले को देखने लग पड़ते हैं, कभी इधर-उधर देखने लग जाते हैं, कभी घड़ी देखने लग पड़ते हैं, कभी घुटने को इधर-उधर करते रहते हैं। वे न तो स्वयं टिक कर बैठते हैं और न ही दूसरों को एकाग्र चित्त होकर बैठने देते हैं। इन्हें 'ठूँगे' कहा जाता है। चौथे वे होते हैं जो महात्मा के वचनों को अपने हृदय में धारण करते हैं। यही वास्तविक श्रोतागण होते हैं और ये विरले ही होते हैं, इन्हें 'चूँघे' कहते हैं।

सत्संग के अन्दर एकाग्रता अत्यन्त आवश्यक है, यदि हम लोग महात्मा के वचनों के notes भी बना लें जैसे कि स्कूल के बच्चे करते हैं तो वे भी बुद्धिमण्डल से आगे नहीं जा पाते हैं क्योंकि जहाँ से वह बात आ रही है, वे वहाँ पर नहीं जा पाते हैं। जब वे लिखने लग गए तो जो वचन चल रहा था, उसका प्रभाव समाप्त हो जाता है। फिर वे ज्ञानी तो बन सकते हैं, अनुभवी महात्मा नहीं बन सकते हैं क्योंकि उन्होंने अनुभव तो किया ही नहीं है। दूसरी तरफ महापुरुष अनुभव की बात बोलते हैं। इस प्रकार से बहुत तरह के विघ्न पड़ जाते हैं।

(शेष पृष्ठ 22 पर)

बाबाणियाँ कहानियाँ

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जून, अंग - 33)

गुरू महाराज जी कहने लगे, ''गोरख नाथ! समुद्र अपनी मौज में ऊँची ऊँची लहरों के साथ उछलता हुआ प्रतीत होता है। लहरें अलग रूप दिखाई देती हैं पर क्या कोई योग्य सूझवान लहरों को समुद्र से अलग हस्ती समझ सकता है। समुद्र तो समुद्र ही है, सागर अपनी मौज में लहरें, ज्वारभाटे उत्पन्न करता हुआ आप ही है, पैदा करना अक्षर भी उचित नहीं है जैसा कि गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं, पूरा शब्द इस प्रकार है -

एक अनेक बिआपक पूरक जत देखउ तत सोई।
माइआ चित्र बचित्र बिमोहित बिरला बूझै कोई॥
सभु गोबिंदु है सभु गोबिंदु है। गोबिंद बिनु नही कोई।
सूतु एकु मणि सत सहंस जैसे ओति पोति प्रभु सोई॥
जल तरंग अरु फेन बुदबुदा जल ते भिंन न होई।
इहु परपंचु पारब्रहम की लीला बिचरत आन न होई॥
मिथिआ भरमु अरु सुपन मनोरथ सति पदारथु जानिआ।
सुक्रित मनसा गुर उपदेसी जागत ही मनु मानिआ॥
कहत नामदेउ हरि की रचना देखहु रिदै बीचारी।
घट घट अंतरि सरब निरंतरि केवल एक मुरारी॥
अंग - 485

जीव की चेतनता पर पाँच भ्रमों का पर्दा पूरी तरह से इस जीव की आत्म सूझ (ज्ञान) को ढक लेता है। जब नाम के बल पर यह अपने आप को ढूँढता है उस समय तत्व वेता महापुरुषों की संगत में आकर इसके इन भ्रमों का प्रत्यक्ष रूप में नाश होता है। नाश होने के उपरान्त इसका जो प्रत्यक्ष अनुभव है उसके बारे में ऐसा फ़रमान गुरबाणी में है -

जब हम होते तब तू नाही अब तूही मै नाही।
अनल अगम जैसे लहरि मइओदधि जल केवल जल मांही॥
अंग - 657

माया जिसके बारे में हम बता रहे हैं, साध संगत जी! यह प्रभु की प्रबल शक्ति है जिसके कारण जीव अपने असली अस्तित्व को भूलकर अपने आपको पाँच तत्वों की देह मानता है। सो पहली तीन प्रकार की माया के बारे में जो आपको बताया है उनकी शक्ति बहुत अधिक नहीं हुआ करती। उनका मुकाबला सत्संग के बल द्वारा सहज ही किया जा सकता है पर यह जो चौथी प्रकार की माया है इसे अज्ञान भूल, अंग्रेजी का अक्षर **Ignorence** तथा **Illusion** भी कह सकते हैं यह सारे संसार में प्रत्येक जीव पर व्याप्त रही है। इसने इसका आत्म स्वरूप भुला कर उसे एक मान रहित, शक्तिहीन जीव बना दिया है, जीव से भी अति निम्न स्तर पर यह अपने आपको देह मानता है और देह के लिये प्रयोग किये गये विशेषण अपने लिए समझता है जैसे कि गोरा-काला, अमीर, गरीब सिख, हिन्दू, मुस्लिम-ईसाई-बौद्धी, जैनी ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य, शूद्र आदि समझता है। यह जीव अनन्त काल से हउमै के वश में पड़ा हुआ पैदा होता है और मरता रहता है। इसके बल के बारे में महाराज जी फ़रमान करते हैं -

मुनि जोगी सासत्रगि कहावत सभ कीन्हे बसि अपनही। तीनि देव अरु कोड़ि तेतीसा तिन की हैरति कछु न रही॥ बलवंति बिआपि रही सभ मही।
अवरु न जानसि कोऊ मरमा गुर किरपा ते लही।।
अंग - 498

एक स्थान पर आप जी का कथन है -

सरपनी ते ऊपरि नही बलीआ।
जिनि ब्रहमा बिसनु महादेउ छलीआ॥
मारु मारु स्रपनी निरमल जलि पैठी।
जिनि त्रिभवणु डसीअले गुर प्रसादि डीठी॥
स्रपनी स्रपनी किआ कहहु भाई।
जिनि साचु पछानिआ तिनि स्रपनी खाई॥
स्रपनी ते आन छूछ नही अवरा।
स्रपनी जीती कहा करै जमरा॥

इह स्वपनी ता की कीती होई।
बलु अबलु किआ इस ते होई॥ अंग - 480

माया का प्रभाव बहुत ही दृढ़ है, माया एक बहुत बड़ा गुब्बार है। इस गुब्बार में से गुरू का ज्ञान ही जीव को शबद का ज्ञान बख्श कर बाहर निकाल लिया करता है। यह वाहिगुरू द्वारा ही की गई है जैसा कि महाराज जी ने फ़रमान किया है -

अपनी माइआ आपि पसारी आपहि देखन हारा।
नाना रूपु धरे बहुरंगी सभ ते रहै निआरा।।
अंग - 537

और ऐसा भी आता है -

आपीन्है आपु साजिओ आपीन्है रचिओ नाउ।
दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ।
दाता करता आपि तूं तुसि देवहि करहि पसाउ।
तूं जाणोई सभसै दे लैसहि जिंदु कवाउ।
करि आसणु डिठो चाउ॥ अंग - 463

एहु माइआ मोहणी जिनि एतु भरमि भुलाइआ।
माइआ त मोहणी तिनै कीती जिनि ठगउली पाईअ॥
अंग - 918

माइआ मोहु गुबारु है गुर बिनु गिआनु न होई।
सबदि लगे तिन बुझिआ दूजै परज विगोई॥
अंग - 559

भगवत गीता में कृष्ण महाराज जी अर्जुन को माया के बारे में फ़रमान करते हुए समझाते हैं -

दैवी हयेशा गुण मई मम माया दुरत्तया।
मामेव ये प्रपदयंते माया मेतां तरंति ते॥
भगवत गीता अधयाइ 7 शलोक 14

संसार में मेरे द्वारा रची गई माया बहुत ही शक्तिशाली है और तीन गुणी होकर रजो गुणी, तमो गुणी तथा सतो गुणी होकर सारे संसार को भ्रमित किए हुये है। मैं इस माया के पर्दे के पीछे अपनी सारी रचना में स्वंय ही नाटय कर रहा हूँ पर जीव को यह पता नहीं चलता तथा वह माया द्वारा मोहित किया गया जीव सदैव यही कहता है कि सारे कार्य अपने आप 'मैं' जीव ही कर रहा हूँ। इस माया को कोई भी व्यक्ति अपनी ताकत के बल पर अकेला कभी भी पार नहीं कर सकता। मैंने समरथ गुरू के पास इस महल की चाबी दी हुई है, वह जीवों को कर्म, उपासना, ज्ञान, विज्ञान द्वारा शनैः शनैः साधना में डालकर, इस भवसागर से पार होने के योग्य बना देता है और कृपा करके गुप्त कथा जिसे अकथ कथा भी कहा जाता है बता देता है। न तो यह माया शास्त्रों के सेवन करने से, वेद पढ़ने से दूर हो सकती है। बड़े बड़े ऋषि, योगी, बड़े बड़े तपस्वी, सिद्ध साधक इस माया ने बुरी तरह से भुला दिये हैं। यह तो यदि समरथ गुरू कृपा करें, तभी तर सकता है। गुरू सगुण स्वरूप हुआ करता है, वह इस माया से पार करने के लिये ही संसार में शरीरधारी हुआ करता है। अन्यथा अर्जुन! यह माया इतनी प्रबल है कि जीव मुझे तो भूलेगा ही पर अपने आपको भी पूरी तरह से भूल जाया करता है। कोई भी अपने बल के भरोसे, अपने ज्ञान के सहारे इस माया से पार नहीं हो सकता क्योंकि इसे इत्र कहा गया है। उस समय अर्जुन यह वचन सुनकर प्रार्थना करने लगा कि महाराज! ऐसी बात तो हो नहीं सकती कि माया से छुटकारा न पाया जा सके, आपने मनुष्य के अपने हाथों में भी बहुत कुछ रखा हुआ है। यदि कोई मनुष्य पक्का इरादा कर ले, वह इस माया से सहज ही तर सकता है। गुरू महाराज जी इस इत्र माया के बारे में फ़रमान करते हैं-

इन्हि माइआ जगदीस गुसाई तुम्हरे चरन बिसारे।
किंचत प्रीति न उपजै जन कउ जन कहा करहि बेचारे॥
धिगु तनु धिगु धनु इह माइआ धिगु धिगु मति बुधि फंनी।
इस माइआ कउ द्रिड़ु करि राखहु बांधे आप बचंनी॥
अंग - 857

अर्जुन ने हठ किया कि जब मनुष्य को पता है कि प्रभु घट-घट में व्याप्त है फिर कैसे भूल सकता है? कृष्ण महाराज जी कहने लगे, ''अर्जुन! यह मेरी माया ठगौरी करती है यानि इसके पास ठगमूरी बूटी (बेहोश करने वाली जड़ी बूटी) है जिसे भी यह बूटी सुंघा दी जाती है वह अपने होश हवास गँवा बैठता है। वह अपने आपको भूल जाता है तथा पारब्रह्म परमेश्वर को भी पूरी तरह से भूल जाता है। माया जो है वह बहुत बड़ा गुब्बार है, गुरू के बिना ज्ञान नहीं होता -

माइआ मोहु गुबारु है गुर बिनु गिआनु न होई।
सबदि लगे तिन बुझिआ दूजै परज विगोई॥
अंग - 559

अर्जुन के कहा, ''यह कैसे हो सकेगा? मैं कैसे भूल जाऊँगा?'' उस समय भगवान ने कहा कि जब मनुष्य को

कोई नशा चढ़ जाता है तो मनुष्य पूरी तरह से बेहोश हो जाता है, अपने आपको उसे ज्ञान ही नहीं रहता तथा इस पर एक कथा है कि एक बार एक राजा दूसरे राजा द्वारा दिए गये प्रीति भोज पर, उसके राज्य में चला गया क्योंकि उसने निमन्त्रण भेजा था। भोजन करने से पहले शराब भेजी गई। इस राजा ने इतनी शराब पी ली कि उसके मुख से अनाप-शनाप बातें निकलने लगीं। मन्त्री बहुत योग्य था वह समझ गया कि राजा जी पूरी तरह से नशे में धुत हो चुके हैं, यह अब अपनी होश में नहीं हैं। कहीं ऐसा न हो कि झगड़ा कर बैठे। वह ऐसा सोचकर उसे (राजा को) बग्घी में बिठाकर, महलों की ओर वापिस चल पड़ा। जब अपने राज महलों के निकट पहुँचे तो वहाँ रक्षक **(Security)** वाले महल के चारों ओर घूम घूम कर पहरा दे रहे थे। जब राजा आया तो उस समय सिपाही ने बन्दूक एक दम सीधी करके कहा, ''**Advance one man and give the quarter sign.**'' एक सिपाही आगे बढ़ो और बताओ कि आज का कर्वाटर साईन क्या है? क्वार्टर साईन बताए बिना कोई भी राज महल में एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता। राजा ने मन्त्री से पूछा कि यह कौन है? उसने कहा कि सरकार! ये आपकी सुरक्षा के लिए फौज के सिपाही पहरा दे रहे हैं। तुरन्त बोला ''मैं कौन हूँ?'' तो मन्त्री ने कहा हजूर! आप इस रियासत के राजा हैं, इन सिपाहियों का काम है आपकी सुरक्षा करना। सो ये पीछे बीट **Beat** पर घूमकर पहरा देते हैं तथा जब तक कोई क्वार्टर साईन न दे तब तक यह किसी को भी महल के अन्दर नहीं जाने देते। राजा बोला, ''मैं राजा बिल्कुल नहीं हूँ, मैं तो सिपाही हूँ। मुझे वर्दी दो, राईफल दो बन्डोलियर दो, मैं भी पहरा दूँगा?'' राजा की जिद देखकर मन्त्री को वर्दी का प्रबन्ध करना पड़ा। एक राईफल भी उसके हाथ में पकड़ा दी, उसने वर्दी पहन कर **Beat** पर पहरा देना शुरू कर दिया। धीरे धीरे उसे होश आई और अपने आपको देखने लगा। उस समय वज़ीर, एकदम जो छिप कर बैठा हुआ था सामने आ खड़ा हुआ और आकर सलाम किया। राजा कहने लगा, ''वज़ीर साहिब! मेरे राजसी वस्त्र कहाँ हैं? यह मैं सिपाही की वर्दी पहने क्यों खड़ा हूँ? मैं राज महलों में क्यों नहीं गया?'' उस समय वज़ीर ने प्रार्थना की कि हजूर! आप नशे के वश में हुए अपने आपको भूल गए थे। शुक्र है कि अब आपने अपने असली स्वरूप को पहचान लिया है। शाही वस्त्र लाए गये। राजा ने निकट ही बने बाथरूम (स्नानागार) में जाकर अपने राजसी वस्त्र पहन लिये। बहुत हैरान हुआ कि मैं इतना भूल गया। गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं कि माया का नशा इतना प्रबल है कि जीव प्रभु का अंश तथा ज्योति होता हुआ भी अपने आपको पूरी तरह से भूल चुका है, नहीं जानता कि इसका असली स्वरूप क्या है? और अपने आपको साढ़े तीन हाथ की देह मानता है। सो यह जीव देह नहीं देह का मालिक है पर इस देही को ही मैं कहकर सम्बोधन करता है, इस देही के रूप में भ्रमित हुआ जीव कहता है कि मैं काला हूँ, मैं गोरा हूँ, मैं दुखी हूँ, मैं सुखी हूँ, मैं अमीर हूँ, मैं गरीब हूँ क्योंकि माया का नशा बहुत ही बुरी तरह भुला देने वाला है। इसी प्रकार कृष्ण महाराज जी अर्जुन से कह रहे हैं कि अर्जुन! इस बात पर ज़िद मत कर। तू मेरी माया के वश में पड़ा हुआ दुखी होगा, विकल होगा मैं तुझे पूर्ण रूप से भूल जाऊँगा। मेरे बताने पर तू विश्वास नहीं करेगा। जब फिर अर्जुन ने हठ पूर्वक माया देखनी चाही तो भगवान उसे रथ में बिठाकर एक तालाब के किनारे ले गये, फिर कहने लगे, ''अर्जुन! मैं अपनी योग माया के पर्दे के पीछे छिपा हुआ हूँ। सभी को प्रत्यक्ष नहीं दीखता, अज्ञानी मनुष्य मुझे नित्य प्राप्त अविनाशी को तत्व द्वारा नहीं जान सकता।'' ऐसा वचन कहकर अर्जुन को फिर दृढ़ करवाया गया और फिर कहा कि तू भूलना मत, भगवान दातुन करने लग पड़े। फिर कहा कि अब मैं तुझे अपनी योग माया दिखाता हूँ। मैं यहीं बैठा हूँ, कहीं नहीं जाऊँगा। पर तू अनेक यत्न करता हुआ भी मुझे पहचान नहीं सकेगा। जा! तू अपनी पूरी कोशिश कर ले, जो ज्ञान तू याद करना चाहता है, कर ले, इस तालाब में स्नान करने के बाद तू मुझे भूल जाएगा। अर्जुन कहने लगा यदि आप इसी तालाब के किनारे बैठे रहोगे तो मैं आपको जरूर ढूँढ लूँगा। इतना कहते हुये अर्जुन ने तालाब में गोता लगाया, जब पानी में से बाहर निकला, क्या देखता है कि न तो वहाँ भगवान हैं, परमात्मा हैं, यह तो अजीब सा जंगल है जहाँ शेर आदि घूम रहे हैं, बड़े बड़े साँप इसकी ओर मुँह किए हुए आ रहे हैं। अर्जुन ने चीखें मारनी शुरू कर दी। भगवान कहीं भी दिखाई न दिए। अर्जुन सारा दिन भटकता रहा, पुकारता रहा, हे गोबिन्द, हे गोपाल, हे नारायण, हे भगवान! आप मुझे दर्शन दीजिए। आप कहाँ अलोप हो गए? आपने तो मुझे कहा था कि मैं कहीं नहीं जाऊँगा। अर्जुन जंगली जानवरों से बचता हुआ अपनी जान बचाता हुआ वृक्षों

पर चढ़ता रहता है। तीन दिन, तीन रातें इस जंगल में भूखा प्यासा घूमता रहा पर भगवान का कहीं पता न चला। उस पर एक बेहोशी सी अवस्था छाने लग पड़ी। चौथे दिन घूमता घूमता जंगल पार करके किसी आबादी की तरफ जा रहा था, एक आदमी से मिला। उसने कहा कि मैं भूल गया हूँ कि हस्तिनापुर शहर कहाँ है और कृष्ण महाराज जी कहाँ हैं? उस आदमी ने कहा कि हस्तिनापुर शहर के बारे में मैंने सुना तो है कि एक शहर होता था पर कृष्ण महाराज जी को हुए काफी समय बीत चुका है। उस समय द्वापर युग था और अब कलयुग का समय चल रहा है। उसने कहा कि हमारे नगर की धर्मशाला में प्रतिदिन महाभारत की कथा होती है, वहाँ तुझे कुछ बता देंगे। वह कथा एक सूझबूझ वाले विद्वान कर रहे हैं, श्रोता जन सुन रहे थे। उसने संक्षेप मात्र पहले हो चुकी कथा को नाम मात्र बताते हुए कहा, साध संगत जी! वैसंपायन जी जन्मेजय राजा को कह रहे हैं कि तेरा परदादा महाभारत के युद्ध में कौरवों को हरा कर, थोड़ा समय राज्य करने के बाद चारों भाईयों सहित शोक करता रहा। महाराज युधिष्ठिर को भीष्म पितामह ने जो बाणों की सेज पर पड़े थे, समझा बुझा कर राज सिंहासन पर बिठा दिया। उन्होंने कई वर्षों तक राज किया। अभिमन्यु के पुत्र परीक्षत को राज्य सौंप कर पाँचों पाँडव द्रौपदी को साथ लेकर हिमालय पर्वत की ओर चले गए। परीक्षत ने भी कई वर्षों तक राज्य किया पर क्योंकि कलयुग उसके राज्य में प्रवेश कर चुका था, उसने कलयुग को कहा कि मेरे राज्य के कार्यकाल में तूने कोई भी मर्यादा नहीं तोड़नी। उसने राजा से कहा कि मुझे यह बता दो कि मैं कहाँ रहूँ? तो राजा परीक्षत ने कहा कि तू सोने में रह सकता है।

एक दिन परीक्षत राजा शिकार खेलने गया। उसने सिर पर सोने का ताज पहना हुआ था, सोने में क्योंकि कलयुग का वास था, उसने उसकी होश अपने वश में कर ली। परीक्षत ने एक हिरन के पीछे अपना घोड़ा दौड़ाया, वह हिरन बहुत दूर निकल गया। वह हिरन की तालाश करता हुआ एक जंगल में पहुँच गया। एक ऋषि जंगल में बैठा था। उसने उसे पूछा कि हिरन किधर गया है? वह समाधिस्थ बैठा था। वह बिल्कुल ही कुछ भी न बोला क्योंकि उसने सुना ही कुछ नहीं था। प्राचीन समय में जब सभी इन्द्रियों को संकोच कर समाधि अवस्था प्राप्त होती थी तो वह संसार को पूरी तरह भूल जाया करते थे। यहाँ तक कि जंगल के हिरन उनके शरीर से खुजली करने के लिए खहण (रगड़ने की क्रिया) लग जाया करते थे। सो इस ऋषि ने कोई उत्तर न दिया। कलयुग के प्रभाव के कारण यह श्रद्धाहीन हो चुका था। इसने सोचा कि यह ऋषि मुझे पाखंड करके दिखा रहा है। कलयुग के प्रभावाधीन हुये राजा ने एक मरा हुआ साँप तीर से उठाया और इसके गले में डाल दिया। थोड़ी देर के बाद उसका शिष्य आया। उसने देखा कि मेरे गुरूदेव के गले में किसी ने मरा हुआ साँप डाल दिया है। उसने श्राप दे दिया कि जिस किसी भुल्लकड़ ने मेरे, गुरूदेव का अपमान किया है। वह तक्षक नाग द्वारा काटने से आज से आँठवें दिन मर जाएगा। जब ऋषि ने समाधि खोली, उसे सारी बात का पता चला तो वह बहुत हैरान हुआ। जब उसे यह मालूम हुआ कि साँप गले में फैंकने वाला तो नेक तथा धर्मात्मा महाराज परीक्षत था जो अभिमन्यु का पुत्र था, उसके ताज में कलयुग का वास होने के कारण उसे भले बुरे का विचार ही न रहा। उसने अपने शिष्य से कहा कि तूने श्राप नहीं देना था, तेरे वचन अमोघ बाण की तरह हैं, अब यह बाण चल गया। सन्तों का वचन कभी टल नहीं, सकता। उसे साँप ने सात दिनों के बाद जरूर डसना है सो तू उसे बता दे जाकर कि वह इन सात दिनों के अन्दर अन्दर अपनी मुक्ति का प्रबन्ध कर ले और शुकदेव मुनि को बुलाकर उससे भागवत पुराण की कथा एक मन एक चित्त होकर श्रवण करे। इस कथा को सुनाने के लिए शुकदेव मुनि जो सर्वज्ञ पुरुष थे उन्हें बुलाकर प्यार तथा प्रेम से कथा सुने। सात दिनों के बाद तक्षक नाग ने एक बहुत ही छोटी सी चींटी का रूप बनाया। जो पुष्प पूजा अर्चना के लिये मंगाये गये थे उनमें से एक फूल पर बैठ गया। भोग उपरान्त परीक्षत को ऋषि ने प्रसाद दिया। जब उसने श्रद्धा पूर्वक मस्तक से लगाया तो उस इच्छाधारी सर्प ने राजा परीक्षत के माथे पर डंक मारा। जिससे उसकी मृत्यु हो गई। उसके बाद राजा जन्मेजय तख्त पर बैठा। उसने महान सर्प मेघ यज्ञ किया और जिसमें हर प्रकार के छोटे बड़े सर्प का आवाहन किया, पर जब तक्षक नाग की बारी आई, उसने एक ब्रह्मचारी का रूप धारण किया हुआ था। मन्त्र बल के द्वारा वह यज्ञशाला की ओर खिंचा चला जा रहा था, जहाँ बहुत बड़ी कुण्ड में अग्नि जलाई गई थी, उस समय वह वैदिक ऋचाओं का बहुत ही सुरीली ध्वनि में उच्चारण करने लगा तथा उसने यज्ञ बन्द करने का वचन ले लिया। जन्मेजय राजा का भी राज्य समाप्त हो चुका था अब

उसका पुत्र राज्य कर रहा था। भगवान कृष्ण को अवतरित हुए भी 300 वर्ष हो चुके थे। जब यह कथा अर्जुन ने सुनी तो अर्जुन कहने लगा कि पण्डित जी! अभी तो द्वापर युग है और मैं ही अर्जुन हूँ, मैं किसी पर्वत पर नहीं गया और न ही हमने अपना राज्य किसी को दिया है। कृष्ण महाराज अभी मेरे साथ थे और मुझे भी समझ में न आया कि वह कहाँ चले गये। मैं स्नान करके अभी सरोवर में से निकला, मुझे कृष्ण महाराज दिखाई न दिये। मैं तीन दिन, तीन रातों का भूखा प्यासा उन्हें ढूँढ रहा हूँ। उस समय कथावाचक ने कहा कि परदेसी! अर्जुन को 300 वर्ष हो चुके हैं। पाण्डव हिमालय पर्वत में हेमकुंट के पास बर्फ के अन्दर द्रौपदी सहित गल चुके हैं, तू कौन है अपने आपको अर्जुन कहलाने वाला। ऐसा मालूम होता है कि तू कोई पागल आदमी है। यदि तूने फिर यही बात की तो लोग तुझे पागल समझकर ईंट पत्थर मारेंगे पर उसने अपने आपको अर्जुन ही कहा कि भगवान कृष्ण मेरे साथ थे। यह बात सुनकर लोगों ने उसे पागल ही समझा और ईंटे-पत्थर मारने शुरू कर दिए। लोगों ने कहा कि इसे पकड़कर पागलखाने में भिजवा देना चाहिए। अर्जुन अपने आपको भूल गया। जब उसे फिर पूछा गया, उसने कहा, ''मेरा नाम परदेसी है।'' उसी नगर में उसने रहना शुरू कर दिया। वहाँ के राजा ने इसका बल और पराक्रम देखकर उसे अपनी फौज में सैनापती बना दिया और अपनी लड़की का विवाह उसके साथ कर दिया। अर्जुन विवाह करके राज महलों के निकट ही, राजा ने जो महल दिया था, उसमें सुख पूर्वक रहने लग गया। उसकी स्त्री खूबसूरत थी, उसने इसे इतना मोहित किया कि इसे भगवान की पूजा, नितनेम, दान सब कुछ भूल गया और पूरा नास्तिक बन गया। यहाँ तक कि जब कभी कोई भगवान की कथा सुनाता तो वह उसे डाँटने लग जाता। इस प्रकार समय बीतता गया। तीन पुत्र भी हो गये, स्त्री के साथ प्यार बढ़ता ही चला गया। एक दिन उसकी स्त्री बीमार हो गई। मरते समय अर्जुन को कहने लगी, ''तू मेरे मरने के बाद दूसरी शादी कर लेगा, मेरे बच्चे अभी बहुत छोटे हैं, यह बहुत परेशान होंगे। तू मुझे वचन दे कि तू दूसरा विवाह नहीं करवायेगा क्योंकि ऐसा करने से मेरे पुत्रों की दुर्दशा होगी।'' यह सुनकर अर्जुन ने कहा कि मैं तो तेरे साथ ही चिता में जलकर मर जाऊँगा, इकट्ठे ही स्वर्ग लोक को जाएंगे।

स्त्री के मरने के बाद इसकी दुर्दशा को देखकर भगवान ने उद्भव को कहा कि अर्जुन को समझा बुझा कर मेरे पास ले आओ। उसने अर्जुन की बाजू पकड़कर कहा कि चलो, भगवान कृष्ण जी तुम्हें बुला रहे हैं। अर्जुन ने बड़े क्रोध से कहा, ''कौन भगवान कृष्ण? मैं अर्जुन नहीं हूँ। वह तो दोनों द्वापर युग में हो चुके हैं।'' उद्भव ने कहा तू मुझे नहीं पहचानता, मैं भगवान कृष्ण का दोस्त हूँ, मैं तुझे लेने आया हूँ। इस प्रकार बहुत समझाया, पर अर्जुन ने न तो उसे पहचाना और न ही उसका कहना माना, उलटा तिरस्कार करके उसे वहाँ से भेज दिया और स्त्री के लिए रुदन करने लगा। स्त्री की अर्थी को उठाकर सभी लोग श्मशान भूमि में ले जा रहे थे। अर्जुन उसके साथ जल जाने के लिए बहुत हठ करने लगा तो ब्राह्मणों ने कहा कि अच्छा, स्नान करके आओ और चिता में बैठ जाओ। पास ही तालाब था। स्नान करके जब बाहर आया तो क्या देखता है कि भगवान कृष्ण जी दातुन कर रहे हैं। भगवान को प्रत्यक्ष देखकर भी स्त्री के वैराग में फूट-फूट कर रो रहा है। वह श्मशान भूमि में जहाँ चिता बनाई हुई थी उधर दौड़ने लगा तो भगवान ने उसकी बाजू पकड़ ली। भगवान ने उसे हल्की सी चपेट लगाकर माया उतार दी क्या देखता है कि उसके सामने उसका भगवान खड़ा है और कृष्ण महाराज दातुन कर रहे हैं। न ही वहाँ श्मशान भूमि है, न ही उसे स्त्री दिखाई दी, बहुत हैरान हुआ और कहने लगा हे भगवान! तेरी माया अपरंपार है, इसके आगे कोई भी नहीं ठहर सकता। बहुत शर्मन्दा होकर भगवान के चरणों में गिर पड़ा और कहने लगा कि हे भगवान! तेरी माया ने मुझे पूरी तरह से भुला दिया और इस मायिक समय में फौजों का सेनापति भी बना, तीन पुत्र भी हुए, बहुत ही सुन्दर स्त्री का साथ मिला, मैं हैरान हूँ कि तेरी माया कितनी प्रबल है? तब भगवान ने कहा कि हे अर्जुन! तुझे मैंने यह अंश मात्र ही दिखाई है। यह जो तूने देखा है, ऐसा भविष्य में होगा। तेरे पौत्र परीक्षत को राज्य मिलेगा तथा तक्षक नाग के डसने से शरीर छोड़ेगा। जन्मेजय भी बहुत प्रतापी राजा होगा। वैश्यांपन ने महाभारत की कथा सुनाई। यह सभी कुछ होगा। मेरी माया ने तुझे पहले ही अनुभव करवा दिया कि माया इस प्रकार जीव को बान्ध लेती है।

'चलता'

(पृष्ठ 9 का शेष)

मत चिपट। गुरू शब्द पर ईमान लाओ जो फरमा रहे है -

आपे पटी कलम आपि उपरि लेखु भि तूं।
एको कहीऐ नानका दूजा काहे कू॥

अंग - 1291

पसरिओ आपि होइ अनत तरंग।।
लखे न जाहि पारब्रहम के रंग॥

अंग - 275

(पृष्ठ 16 का शेष)

यह बच्चा (सधना) था, यह कसाई का कार्य तो करता है लेकिन इसके मन के अन्दर पूर्वजन्म के कर्मों का इतना अधिक बल था कि यह अत्यधिक वैराग्य भाव में रहता है। यह प्रत्येक समय कहता रहता है कि हे प्रभु जी! मैं क्या करूँ? क्योंकि मुझे कोई भी दूसरी आजीविका आती नहीं है।

एक दिन की बात है कि यह जिस शहर में रहता था, उसी शहर का (सेवान शहर) जो चौधरी था, वह बीमार हो गया, उसे किसी ने बताया कि थोड़ा सा माँस लाकर उसकी तरी पिलाओ उससे यह ठीक हो जाएगा। गर्मी का महीना था और शाम हो चुकी थी। चौधरी के लोग 'सधने' के पास आ गए और कहने लगे कि देखो बन्धु! हमें थोड़ा सा माँस चाहिए और यह बहुत जरूरी है क्योंकि चौधरी की जिन्दगी का सवाल है। वह बोला देखो! कल है दसवीं इसलिए कल को कोई भी माँस न तो कटेगा और न ही बिकेगा। यदि मैंने आज काट दिया तो यह परसों एकादशी को जाकर बिकेगा लेकिन गर्मी का महीना है, मेरा सारा माँस खराब हो जाएगा। जब वे लोग बार-बार कहते रहे तो वह कहने लगा कि अच्छा बाहर बैठो। वह अन्दर चला गया और छुरी उठा लाया उसने सोचा कि मैं बकरे की एक टांग काट कर इसे दे देता हूँ। कल का दिन यह तड़पता हुआ काट जाएगा और परसों को तो मैंने इसे काट ही लेना है। उस समय अचानक इसके अन्दर प्रकाश हो गया कि यह तो मैं बहुत ही बुरा कार्य करने लगा हूँ, इसका फल तो मुझे भोगना पड़ेगा क्योंकि महापुरुष कहते हैं कि -

भोगे बिन भागहि नही करम गती बलवान।

जो तुमने कर्म कर लिया उसका फल तो तुम्हें भोगना ही पड़ेगा क्योंकि फल को भोगे बिना पीछा नहीं छूट पाया करता है। इस प्रकार से पढ़ लो -

धारना - फल दितिआँ बाज ना जाणा,
तेरिआँ करमाँ ने फल दितिआँ।

उसके मन के अन्दर विचार आई कि आज तो तुम इसकी जाँघ को काट रहे हो लेकिन कल को जब तुम बकरा बनोगे तो यह तुम्हारी जाँघ को काटेगा। उस समय फिर तुम्हें कितनी तड़पन होगी? कितना दुख होगा? अब उसने छुरी फेंक दी। उसके अन्दर रौशनी हो गई। उसका अन्दर का ख्याल ही बदल गया, बाहर आ गया। कहने लगा मैं यह नहीं कर सकता हूँ। इसके बाद वह माँस को मोल ले आता है और उसे बेचने चला जाता है क्योंकि उसकी आजीविका ही यह थी। टोकरे में डालकर ले जाता है और जहाँ कहीं खरीददार होते हैं, वहाँ पर वह उस माँस को बेचकर, अपना और अपने परिवार का पेट पालता है।

आज एक महापुरुषों की मण्डली आ रही थी, दूर से ही इसके कानों में आवाज पड़ी, इसने समझने का यत्न किया लेकिन इसे वे शबद समझ में नहीं आ रहे हैं। आँखों से जल बहना शुरू हो गया कि ऐ मन! तुम्हारा तो सारा जन्म ही खराब हो गया है। अब तुम क्या करोगे? काल के बारे में कोई पता नहीं है कि कब आ जाएगा, तुम संगत में जाकर वचन तो सुनते रहते हो लेकिन किसी महात्मा के साथ तुम्हारा सम्पर्क तो हुआ नहीं है? जब वह सन्त मण्डली नजदीक आ गई तो उसने भी अपना रुख बदल लिया और उस सन्त-मण्डली की तरफ ही वह भी चल पड़ा कि चलो सन्तजनों के दर्शन भी करेंगे तथा उनके वचन भी सुनेंगे। उनकी आवाज बहुत ही मनमोहक है और वे इस प्रकार के वचन कर रहे हैं -

धारना - सिमरन भजन दइआ नहीं कीनी,
तउ मुख चोटा खावेंगा।

'चलता'

कितु बिधि मनु धीरे

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

सतिनामु श्री वाहिगुरु,
धंन श्री गुरु नानक देव जए महाराज!

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ॥
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ ॥
अंग - 256

फिरत फिरत प्रभ आइआ
परिआ तउ सरनाइ॥
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥
अंग - 289

धारना - लेखे विच ला लओ जी,
जनम तुमारे लेखे।

हम सरि दीनु दइआलु न तुम सरि
अब पतीआरु किआ कीजै ॥
बचनी तोर मोर मनु मानै जन कउ पूरनु दीजै॥1॥ हउ
बलि बलि जाउ रमईआ कारने ॥
कारन कवन अबोल ॥ रहाउ ॥
बहुत जनम बिछुरे थे माधउ
इहु जनमु तुम्हारे लेखे॥
कहि रविदास आस लगि जीवउ
चिर भइओ दरसनु देखे ॥ *अंग - 694*

धारना - आसा लग जी जीवाँ वाहिगुरु,
मैनूं चिर भइआ दरशन देखे।

कई जनम भए कीट पतंगा ॥
कई जनम गज मीन कुरंगा ॥
कई जनम पंखी सरप होइओ ॥
कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ ॥ 1 ॥
मिलु जगदीस मिलन की बरीआ ॥
चिरंकाल इह देह संजरीआ ॥ *अंग - 176*

केते रुख बिरख हम चीने केते पसू उपाए ॥
केते नाग कुली महि आए केते पंख उडाए ॥
अंग - 156

फिरत फिरत बहुते जुग हारिओ मानस देह लही ॥
नानक कहत मिलन की बरीआ सिमरत कहा नही॥
अंग - 263

साधु संगत जी! उच्च स्वर में बोलो! सतिनाम श्री वाहिगुरू। अपने-अपने व्यवसायिक कार्यों को विराम देते हुए आप सब गुरू दरबार में पहुँचे हो। एक सवाल है, इस जीव के सामने, जो कि अरबों-खरबों वर्षों से हल नहीं हो पा रहा है। इसका कारण क्या है? यह क्यों नहीं हल हो पा रहा है? बड़े लोग कोशिश करते हैं कि यह सवाल हल हो जाए लेकिन यह मसला इतना भयंकर है कि यह हल ही नहीं हो पा रहा है। इस प्रश्न को हल करने के लिए पढ़े-लिखे व अनपढ़ तथा अमीर व गरीब सभी लगे हुए हैं। एक तो वे लोग हैं जो इसी के अन्दर इतना ज्यादा डूब गए हैं कि उन्हें इस बात का भी कोई ज्ञान नहीं है कि इसमें कोई मसला भी है और एक वे हैं जिन्हें अभी थोड़ी सी होश है और वे थोड़े-थोड़े श्वास ले रहे हैं तथा वे यह भी सोचते हैं कि यह तो मसला ही बहुत बड़ा है क्योंकि यह सिलसिला तो अरबों-खरबों सालों से लगातार जारी है। असंख्य प्रकार के शरीरों को हम धारण कर चुके हैं, कभी साँपों के शरीर धारण किए, कभी मछलियों के, कभी हिरणों के, कभी हाथियों के धारण किए और न जाने कितनी बार मनुष्य भी बने। गुरू जी कहते हैं कि जब तुम मनुष्य बनते हो तो उस समय तुम्हारा सारा जीवन वैर-विरोध में ही व्यतीत हो जाता है -

बैर बिरोध काम क्रोध मोह ॥
झूठ बिकार महा लोभ धोह ॥
इआहू जुगति बिहाने कई जनम ॥
नानक राखि लेहु आपन करि करम ॥ *अंग - 268*

और इन्हीं जज्बों के अन्तर्गत जीवन को बिताते हुए उसे हार कर लौट जाता है। कोई विरला मनुष्य है जो कि यहाँ से जीत कर जाता है, अन्यथा सारा संसार हार कर ही जाता है। इसका कारण यह है कि जब यह विभिन्न योनियों में से

घूम कर आता है और उसके बाद मनुष्य बनता है तो उस समय तक इसके अन्तःकरण में बहुत प्रकार के स्वभाव जमा हो चुके होते हैं। भूतों-प्रेतों के स्वभाव भी इसके अन्दर जमा हो जाते हैं क्योंकि यह भी योनियाँ हैं। इन योनियों की हम लोग तो सात-आठ किस्मों को ही जानते हैं लेकिन इनकी किस्में हिसाब-किताब से बाहर हैं। कोई प्रेत है, कोई खवीस है, कोई जिन है, कोई चुड़ैल है, कोई कुछ है। इस प्रकार के सारे स्वभाव इसके अन्दर आ जाते हैं। इसी तरह से पशुओं के स्वभाव भी इसके अन्तःकरण में विद्यमान होता है। कुत्तों व बिल्लों का स्वभाव भी इसके अन्दर होता है, गायों, भैंसों व बैलों का स्वभाव भी यह लेकर बैठा होता है। इस प्रकार से 83 लाख योनियों का स्वभाव इसके अन्दर होता है जबकि अन्य योनियों में उनका केवल अपना स्वभाव ही होता है, दूसरी योनियों का नहीं। बैल के अन्दर बैल का स्वभाव ही होगा, साँप का नहीं होगा। यह तो केवल मनुष्य ही है जिसके अन्तःकरण में सारे स्वभाव जमा पड़े होते हैं, यही कारण है कि इस जीव के अन्दर टिकाव नहीं होता है। कभी यह ऊपर की तरफ चढ़ता है और कभी फिर नीचे की तरफ आ जाता है -

कबहू जीअड़ा उभि चड़तु है कबहू जाइ पइआले॥
लोभी जीअड़ा थिरु न रहतु है चारे कुंडा भाले ॥

अंग - 876

यह कभी भी स्थिर नहीं रहता है। मुश्किल तो यह है कि आदमी का स्वभाव भी इसके अन्दर है और उससे बहुत नीचे स्तर के तथा बहुत ऊपर के स्तर तक के स्वभाव भी इसके अन्दर होते हैं क्योंकि इसके अन्दर वाहिगुरू जी रहते हैं। वैसे तो सारी योनियों में परमात्मा का निवास है लेकिन उनमें प्रकट रूप में नहीं है जबकि मनुष्य के अन्दर परमात्मा प्रकट रूप में विद्यमान है। लेकिन वह संस्कारों के द्वारा ढका हुआ है। गुरू जी कहते हैं कि परमात्मा तो इसके अन्दर ही है -

काइआ नगरु नगर गड़ अंदरि ॥
साचा वासा पुरि गगनंदरि ॥
असथिरु थानु सदा निरमाइलु
आपे आपु उपाइदा ॥ 1 ॥
अंदरि कोट छजे हटनाले ॥
आपे लेवै वसतु समाले ॥
बजर कपाट जड़े जड़ि जाणै
गुर सबदी खोलाइदा ॥2॥
भीतरि कोट गुफा घर जाई ॥
नउ घर थापे हुकमि रजाई ॥
दसवै पुरखु अलेखु अपारी
आपे अलखु लखाइदा ॥

अंग - 1033

अतः इस मनुष्य के अन्दर निर्मल स्वभाव भी हैं, देवताओं के भी हैं, अवतारों के भी हैं, साधुओं के भी हैं, अब यह वाहिगुरू ही जाने कि कौन सा स्वभाव प्रखर होता है। यही कारण है कि व्यक्ति पुनः नीचे गिर जाता है। पहले यह चढ़ाई करता है, गुरवाणी पढ़ता है, गुरवाणी में आनन्द लेता है, उसकी विचार करता है लेकिन यदि कोई छोटा-मोटा संकट आ जाता है तो यह पुनः पशुओं के स्वभाव में आ जाता है। जिस प्रकार से पशु एक दूसरे को मारने लग जाते हैं, जैसे शेर एक दूसरे को मारने लग पड़ते हैं या जानवरों को मार-मार कर फेंकते जाते हैं, उसी प्रकार से यह भी करने लगता है, यानि कि यह पशुओं की सी गिरावट में आ जाता है। कभी यह बहुत ऊँचा उठ जाता है। जिस प्रकार से रहट की बाल्टियाँ कभी ऊपर तो कभी नीचे होती रहती हैं, इसी प्रकार से इसका स्वभाव भी ऊपर-नीचे होता रहता है। अतः जितनी देर तक यह परमात्मा से मिल नहीं जाता है उतनी देर तक इसका छुटकारा नहीं हो पाता है। इस प्रकार से यह मसला हमारे सामने है -

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥
अवरि काज तेरै कितै न काम ॥
मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ॥

अंग - 12

गुरू जी ने बता दिया है कि तुम साधुओं की संगत में जाकर नाम सिमरन करो, भजन-बन्दगी करो क्योंकि तुम्हारे अन्य सभी कार्य किसी काम के नहीं हैं - *'अवरि काज तेरै कितै न काम।।'* वे तो पूर्णतः निरर्थक हैं। रोटी-पानी तो परमात्मा सबको देता है लेकिन जो असली काम नाम जपने का है, उसे यह नहीं करता है क्योंकि इसे यह पता ही नहीं है कि परमात्मा कहाँ है? और कैसे मिलेगा? दो प्रकार की विद्या होती है। एक विद्या तो वह है जो पुस्तकों में से पढ़ी जाती है और जिसे प्रोफेसर लोग पढ़ाते हैं या मास्टर, टीचर या उस्ताद सिखाते हैं। किसी ने टैक्नीशियन बनना है, मेकैनिक बनना है, उसका उस्ताद उसे सिखा देगा क्योंकि वह विद्या बाहर से आती है। दूसरी जो विद्या है उसे परा विद्या कहते हैं। यह आदमी के अन्दर से आती है। उसकी न तो कोई किताब है, न ही उसका कोई अक्षर है। लेकिन उस

अन्दर की विद्या को पढ़ाने वाले महापुरुष हुआ करते हैं जिन्होंने स्वयं पढ़ाई की होती है और वे भी योग्य हों, अयोग्य नहीं। महापुरुष तो किसी अवस्था को कहते हैं। महापुरुष न तो किसी भेष को कहते हैं और न ही किसी डेरे को कहते हैं बल्कि एक विशेष अवस्था का नाम 'महापुरुष' होता है। जिसके अन्दर वह अवस्था प्रकट हो जाए, वह 'साधू' या 'सन्त' हुआ करता है। वह विद्या अन्दर से आती है, बाहर से नहीं। बाहरी विद्या तो और प्रकार की होती है जबकि अन्दर की विद्या एक अलग प्रकार की होती है। यदि अन्दर की विद्या को कोई अच्छी तरह से पढ़ ले तो फिर समस्त विद्याएँ उसके अन्दर ही आ जाती हैं। वैसे यह बात हमें बड़ी अजीब लगती है कि बिना पढ़े व बिना देखे विद्या कैसे आ जाएगी? यह आधारभूत विद्या सन्तजनों के पास हुआ करती है। एक अवस्था ऐसी होती है जहाँ पर कि सब कुछ पता चल जाता है। इसलिए 50 प्रतिशत से 75 प्रतिशत तक दिमागी तौर पर मनुष्य के अन्दर होती है, 25 प्रतिशत से 50 प्रतिशत तक पशुओं व पक्षियों में होती है और 25 प्रतिशत तक जड़ियों-बूटियों व वृक्षों में होती है। अब जो 75 प्रतिशत से ऊपर 100 प्रतिशत तक की विद्या है उसकी समझ किसके अन्दर होती है? वह साधुओं के अन्दर होती है क्योंकि उन्होंने आन्तरिक विद्या पढ़ी होती है, यही कारण है कि बाहरी विद्या तो उनके पीछे-पीछे चल पड़ती है। जब किसी शायर ने कविता बनानी होती है, तो वह उड़ान भरता है और कागज पर लिख लेता है, उसके बाद आँखें बन्द कर लेता है, फिर लिख लेता है, थोड़ी देर बाद वह अपनी ही लिखी हुई पंक्तियों को काट देता है। फिर वह दूसरी तरह से लिखने लग जाता है। इसका कारण यह है कि वह किसी सीमा में से विद्या आ रही है, ऊपर से नहीं आ रही है। जो विद्या ऊपर से आती है, उसका नाम है - अल्हाम। जो गुरवाणी ऊपर से आ रही है, फिर उसकी कटाई या छंटाई नहीं करनी पड़ती है क्योंकि वह तो पूरी तरह से पहले ही शुद्ध होकर आती है। उसे तो चाहे हजार साल बाद भी पढ़ लो उसे बदला नहीं जा सकता है। वह शाश्वत वाणी होती है जो कि सदैव सत्य ही रहती है। उसके अतिरिक्त अन्य सारी वाणियाँ, कच्ची बाणियाँ होती हैं। जो वाणी आती है कच्चे मण्डल से है, वह कच्ची ही तो होगी। दूसरी तरफ जो वाणी सत्य के मण्डल से आती है चाहे वह कविता के रूप में आए, वह सच्ची वाणी ही हुआ करती है। वह सतगुरू की या प्रभु जी की वाणी होती है। उसका बहाव स्वतः ही होता है क्योंकि आन्तरिक विद्या को पढ़कर सारे बैरियर टूट जाते हैं। श्री गुरू नानक देव जी प्रायः कहा करते थे कि मरदाना! रवाब बजाओ, वाणी आ रही है। उस समय आप कहते क्या हैं -

जैसी मै आवै खसम की बाणी
तैसड़ा करी गिआनु वे लालो ॥ ***अंग - 722***

वाणी पहले आ गई। 32 वर्ष पहले वाणी आ गई। 13 वर्ष पहले, पहले वाली घटना से और 29 वर्ष पहले दूसरी घटना से। गुरवाणी का बहाव आ रहा है। जो कुछ घटना घटित होने वाली है, वह गुरू जी ने पहले ही ब्यान कर दिया-

काइआ कपड़ु टुकु टुकु होसी
हिदुसतानु समालसी बोला ॥ ***अंग - 723***

यह गुरू की वाणी होती है, इसे बदला नहीं जा सकता है, यह जिस रूप में आई है, उसी रूप में रहती है। इसमें से न तो एक अक्षर घटाया जा सकता है और न ही इसमें कोई अक्षर जोड़ा जा सकता है। यह सत्य वाणी कहलाती है।

जो अन्दर की विद्या है, उसे हम पढ़ते नहीं हैं, पढ़ने से अनजान होने के कारण हमें अन्दर की बात का पता ही नहीं चल पाता है और जब तक आन्तरिक अनुभव जागृत नहीं होता है, तब तक जन्म-मरण का चक्कर समाप्त नहीं हो पाता है। दरअस्ल हउमै के मण्डल के अन्दर यह कर्म करता है और कर्मों के द्वारा यह बँध जाता है। यदि इसे पूरा समर्थ गुरू मिल जाए और वह अपनी कृपा द्वारा इसे पार लगा दे तब कहीं जाकर इसका छुटकारा हो पाता है।

अतः साधु संगत जी! इस प्रकार का मसला हम सबके गले पड़ा हुआ है। यह मसला हल नहीं हो पाता है और हमारा समय समाप्त हो जाता है। पता नहीं कितने जन्म बीत गए हैं, कभी गरीबी आ गई, कभी अमीरी आ गई, कभी शाही खानपान में पैदा हो गए, कभी भिखारियों के घर में पैदा हो गए क्योंकि इस बात का कोई पता नहीं होता है कि परमात्मा कहाँ पर भेज दे। जो मुख्य बात है वह वहीं की वहीं रह जाती है। समझाने वाले समझाते रहते हैं लेकिन हमें बात समझ में नहीं आ पाती है। इसीलिए महात्माजन इस प्रकार से हमें सचेत करने की चेष्टा करते हैं -

धारना - भाग जिहनाँ दे मंदे,
दितीआँ बाँगाँ तों ना जागदे।

फरीदा कूकेदिआ चाँगेदिआ मती देदिआ नित ॥

जो सैतानि वंजाइआ से कित फेरहि चित ॥

अंग - 1378

गुरू जी कहते हैं कि जिनके मन के अन्दर मनमुखताई है, जो साकत लोग हैं, उन्हें जाग ही नहीं आ पाती है, जबकि महात्मा लोग तो हमें बहुत समझा-समझा कर बताते हैं, यही नहीं अपितु, चार वेद, छः शास्त्र, सत्ताइस स्मृतियाँ, उपनिषद, कुरान शरीफ, तौरेत, अंजील, जम्बूर, बाइबिल तथा श्री गुरू ग्रन्थ साहिब महाराज जी हमें खूब समझा-समझा कर बतलाते हैं लेकिन यह जीव ऐसा है कि जरा सा भी समझने का यत्न नहीं करता है। कई महात्मा तो चुप करके ही बैठ जाते हैं कि क्यों वैसे ही टक्करें मारनी हैं जबकि इनके भाग्य ही मन्दे हैं। इन्हें तो आवागमन के चक्रव्यूह में ही घूमते रहने दो। दूसरी तरफ कुछ महात्मा इस प्रकार के होते हैं जो कहते हैं कि ये अनजान हैं, इसलिए इन्हें येन-केन-प्रकारेण बाहर निकालो। इन्हें इस बात के बारे में समझाओ ताकि ये अपना भला-बुरा समझ सकें। अतः इस व्यक्ति को पता नहीं चलता है और पता न चलने के कारण यह चक्कर काटता रहता है। बड़ी-बड़ी विचारें इसके अन्दर उत्पन्न हो जाती हैं, बड़ी-बड़ी किताबें यह पढ़-लिख लेता है लेकिन रहता वहीं का वहीं है। इसका कारण यह है कि इसने अन्दर की पढ़ाई पढ़ी नहीं है। अन्दर की पढ़ाई का स्कूल अलग प्रकार का है, उसकी फीस भी अलग प्रकार की है। सारी बात न होने के कारण वह पढ़ाई नहीं हो पाती है। हमारे सामने गुरसिक्खों के जीवन हैं, जब हम उनके जीवन के बारे में विचार करते हैं तो हमारा कुछ मार्ग दर्शन हो पाता है कि वे किस प्रकार से पार हुए हैं। गुरू घर के अन्दर दो चीजें हैं, एक है सेवा और दूसरी है - सिमरन। सिमरन कहते हैं याद को। परमात्मा का वाहिगुरू को याद रखना है। वाहिगुरू तो प्रत्येक के साथ है लेकिन हम इस बात को मानते ही नहीं हैं। हम श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की कोई भी बात मानना नहीं चाहते हैं, कोई भी बात हमारे हृदय में बैठती नहीं है। श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं कि -

जह जह पेखउ तह हजूरि दूरि कतहु न जाई ॥
रवि रहिआ सरबत्र मै मन सदा धिआई ॥ 1 ॥
ईत उत नही बीछुड़ै सो संगी गनीअै ॥
बिनसि जाइ जो निमख महि सो अलप सुखु भनीअै॥

अंग - 677

लेकिन हम इस बात को मानेंगे नहीं। गुरू जी कहते हैं कि हम जिधर भी देखते हैं, चहुँओर परमात्मा ही परमात्मा है, प्रत्येक समय हमारे साथ परमात्मा है। साथ ही नहीं, वह प्रत्येक समय हमारी मदद भी करता है। जब हम उससे सहायता माँगते हैं तो उस समय वह हमारी बात को सुन भी लेता है। वह केवल हमारी ही नहीं सुनता है अपितु सारी प्रकृति की आवाज को सुनता है -

हाथी की चिंगार पर पाछै पहुचत ताहि।
चीटी की पुकार पहिले ही सुनीअत है।

अकाल उसतति

वह चींटी की पुकार भी सुन लेता है और हाथी की भी सुन लेता है। दरअस्ल वह चींटी के साथ भी रहता है और हाथी के साथ भी रहता है। गुरू जी कहते हैं कि तुम तो मूर्ख हो जो कि इस बात को मानते ही नहीं हो। तुम्हारे लेखे में तो केवल एक चीज ही पड़ेगी अन्य चीजें तो तुम्हारे लेखे में पड़ेंगी ही नहीं -

धारना - लेखे तेरे ओ इक गूल है,
होर हउमै झखणा झाख।

पड़ि पड़ि गडी लदीअहि पड़ि पड़ि भरीअहि साथ॥
पड़ि पड़ि बेड़ी पाईअै पड़ि पड़ि गडीअहि खात ॥
पड़ीअहि जेते बरस बरस पड़ीअहि जेते मास ॥
पड़ीअै जेती आरजा पड़ीअहि जेते सास॥
नानक लेखै इक गल होरु हउमै झखणा झाख॥

अंग - 467

पढ़ लिख गया, बड़ा आदमी बन गया, बहुत सारा धन कमा लिया, बहुत सारी जायदाद बना ली, राजनैतिक शक्ति प्राप्त कर ली, प्रतिष्ठा मिल गई, टैलीविजनों पर दिखाया जाने लग पड़ा, जहाँ भी जाता है, जिस देश में भी जाता है, सारा देश उसे देखने के लिए उमड़ पड़ता है, लेकिन महाराज जी कहते हैं कि यह तो कुछ भी नहीं है -

कीटा अंदरि कीटु करि दोसी दोसु धरे ॥ अंग - 2

वह कुछ भी ऊँचा नहीं हो सका है -

जे जुग चारे आरजा होर दसूणी होइ ॥
नवा खंडा विचि जाणीअै नालि चलै सभु कोइ ॥
चंगा नाउ रखाइ कै जसु कीरति जगि लेइ ॥
जे तिसु नदरि न आवई त वात न पुछै के ॥
कीटा अंदरि कीटु करि दोसी दोसु धरे ॥ अंग - 2

यदि परमात्मा को वह स्वीकार्य न हो पाए तो कीड़ों की सी दशा के साथ उस व्यक्ति की तुलना की गई है। अतः

वह कौन सी दशा है जिसकी तरफ महाराज जी इशारा करते जा रहे हैं क्योंकि गुरू जी तो खोल-खोल कर बतलाते जा रहे हैं -

पेखत सुनत सदा है संगे
मै मूरख जानिआ दूरी रे ॥ ***अंग - 612***

वह मुझे देखता भी है, मेरी बात भी सुनता है और मेरे साथ भी रहता है। यदि भूत साथ में रहता हो तो व्यक्ति डर जाता है कि न जाने किस जगह वह मुझे पकड़ ले और किस जगह किसी कुएँ में गिरा दे, किसी गाड़ी या कार-मोटर के आगे गिरा दे। लोग डरते हैं कि इसके अन्दर तो भूत आ जाता है, उसे अकेला नहीं भेजेंगे। लेकिन परमात्मा के बारे में किसी को भी ज्ञान नहीं है, क्यों नहीं है? क्योंकि वह तो विशुद्ध प्यार ही है। वह किसी को डराता नहीं है बल्कि वह तो पालन-पोषण करता है। वह तो जीव को सही मार्ग दिखाता है -

संगि सहाई सु आवै न चीति ॥
जो बैराई ता सिउ प्रीति ॥ ***अंग - 267***

जो विरोधी हैं जैसे कि काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या, निन्दा, चुगली, बखीली, झूठ, छल व कपट आदि इन्हें तो अपना मित्र बनाए रखता है और जिस परमात्मा ने इसे पार लागना है, उसे यह जानता पहचानता ही नहीं है तथा उसकी तरफ से तो यह सदैव ही पीठ किए रहता है। श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के पीछे लड़ पड़ता है, गोली मारने के लिए तैयार हो जाता है कि वह मेरे गुरू को ऐसे क्यों कहता है। भद्रपुरुष! तुम्हें गुरू का क्या लाभ हुआ? जिस गुरू को मिलने से तुम्हारा अन्दर से अन्धेरा ही न जा सका तो फिर उसका क्या लाभ हुआ? इसमें तुम्हारा दोष है या गुरू का? गुरू जी कहते हैं कि पहला दोष तो तुम्हारा ही है क्योंकि तुम अभी तक तो मेरे पास आए ही नहीं हो -

कबीर साचा सतिगुरु किआ करै
जउ सिखा महि चूक ॥
अंधे एक न लागई जिउ बाँसु बजाईऐ फूक ॥
अंग - 1372

गुरू तो पूरा है लेकिन शिष्य अभी अधूरा है। वह अभी तक पात्र ही नहीं बन सका है। पहले समय में सन्तजन बहुत लम्बे समय तक अपना शिष्य नहीं बनाया करते थे। बारह-बारह वर्षों तक सेवा करवाने के बाद भी परीक्षा लिया करते थे कि यह पूरा शिष्य है अथवा अभी अधूरा ही है।

कबीर साहिब के पास अफगानिस्तान का बादशाह राजभाग छोड़कर आया जिसका नाम इब्राहीम आदम था। वह सूफी था और छः वर्षों तक कबीर साहिब की सेवा करता रहा। माता लोई जी ने कहा, भक्त जी! आपने इन्हें नाम की दात नहीं दी? यह राजा है और अपने राजभाग को छोड़कर आया है, यह तो सारा दिन यहाँ पर झाड़ू लगाता रहता है, बर्तन धोता है, आने-जाने वाले साधुओं की सेवा करता है, इसलिए इसे भी कृप्या नाम वस्तु प्रदान कर दें।

कबीर जी कहने लगे, लोई! यह अभी नाम देने योग्य पात्र नहीं बन पाया है और पात्र के बिना यदि किसी को कोई वस्तु दे दी जाए तो वह सस्ती चली जाती है।

गुण का गाहकु जे मिलै तउ गुणु लाख विकाइ ॥
अंग - 1086

यदि वह गुणों का ग्राहक हो फिर तो वह वस्तु लाखों की बिक जाएगी अन्यथा -

कबीरा एकु अचंभउ देखिओ हीरा हाट बिकाइ ॥
बनजनहारे बाहरा कउडी बदलै जाइ ॥ अंग - 1372

फिर वह कौड़ियों के भाव ही चला जाता है। अतः अभी यह पात्र नहीं बना है, अभी तो यह अहंभाव में जी रहा है। इसलिए अभी मैंने इसे अपना शिष्य नहीं बनाना है।

लोई बोली, महाराज! इसका पता कैसे चलेगा? कबीर जी बोले, आज जिस समय यह दोपहर में गंगा स्नान करके लौटेगा तो उस समय तुम इसके ऊपर कूड़ा डाल देना। माता लोई ने ऐसा ही किया, माता लोई ने घर की छत पर खड़े होकर इसके ऊपर कूड़ा उड़ेल दिया। जब कूड़ा उसके ऊपर गिरा तो वह एकदम से झुंझला गया और उसके अन्दर की बादशाही बाहर निकल आई। जो उसका सन्त स्वभाव था वह तो नीचे दब गया और जो वास्तव में अन्दर था, वह बाहर आ गया। उसने कहा यदि मेरे राज्य में कोई ऐसे मेरे ऊपर कूड़ा डाल देता तो फिर मैं उसे बताता। उसने कोई ख्याल नहीं किया कि ये तो माता लोई जी हैं। उसका अपना वास्तविक स्वभाव बाहर निकल आया।

कबीर साहिब पूछने लगे कि वह क्या कहता था?

माता लोई जी बोलीं कह रहा था कि यदि मेरे राजभाग के अन्दर ऐसा हो जाता तो फिर देखते कि मैं क्या करता।

कबीर जी बोले, फिर यह अभी जीवित ही है न? जो अभी जीवित हैं, उनका सन्तजनों के साथ अभी सम्बन्ध नहीं

जुड़ा करता है। सन्तजनों का सम्बन्ध तो मरे हुओं के साथ ही जुड़ा करता है -

पहिला मरणु कबूलि जीवण की छडि आस ॥
होहु सभना की रेणुका तउ आउ हमारै पासि ॥

अंग - 1102

छः वर्ष और बीत गए कबीर साहिब कहने लगे, अब यह पात्र बन गया है क्योंकि यदि पात्र न हो तो -

राम पदारथु पाइ कै कबीरा गाँठि न खोल् ॥
नही पटणु नही पारखू नही गाहकु नही मोलु ॥

अंग - 1365

गुरू जी ने चार बार 'नहीं' कहा है। कहते हैं कि तुम्हारे पास बहुत कीमती चीज है - नाम की। इसे यूँ ही मत लुटाओ, यूँ ही मत दो क्योंकि इसका योग्य ग्राहक कोई नहीं है। आज बारह वर्ष बीत गए हैं। कबीर जी ने कहा आज आप पुनः इसके ऊपर कूड़ा उंड़ेल देना। माता लोई जी ने टोकरी में कूड़ा रखा हुआ था। वह सेवादार (जो पहले राजा था) जैसे ही स्नान करके आया तो माता जी ने उसी प्रकार से उसके ऊपर कूड़ा डाल दिया। जब उसके ऊपर कूड़ा गिरा तो वह दिव्यानन्द में आ गया और नाचना शुरू कर दिया। कहने लगा मेरी माता कितनी अच्छी है, अपने बच्चों का कितना ख्याल रखती है, सारे महापुरुषों की चरण धूल मेरे शीश पर डाल दी, फलस्वरूप मेरे जन्म जन्मान्तरों के सारे पाप कट गए। आप तो बहुत दयावान हो। आपने कृपा कर दी है। यह कहते हुए वह नाचने लग पड़ा।

कबीर साहिब के पास माता लोई जी आई, कहने लगीं, वह तो दिव्यानन्द में नाच रहा है और इस प्रकार के वचन कर रहा है। कबीर जी बोले, ठीक है, अब वह नाम देने के योग्य हो गया है। उस समय कबीर जी ने उसे पूर्णज्ञान करवा कर रिद्धियों-सिद्धियों के भण्डारे प्रदान कर दिए तथा उसे कहा कि अब तुम वापिस अफगानिस्तान लौट जाओ और वहाँ जाकर अपनी भाषा में, अपने लोगों के बीच प्रचार करो।

अतः जब तक हम योग्य नहीं बनते हैं, तब तक धर्म के अन्दर प्रदूषण का काम करती है और मात्र एक रस्म बनकर रह जाती है। इसे धर्मान्तरण भी कहते हैं कि चाहे हिन्दू बना लो, मुसलमान बना लो, सिक्ख बना लो, उसमें दोष ही दोष मिल जाया करते हैं। इसके बाद जो धर्म की शक्ल है वह पूर्णतः बदल जाती है और वह पूरी तरह से प्रदूषित हो जाती है। उसकी वास्तविक शक्ल फिर नहीं रह जाती है क्योंकि वह अज्ञानियों के हाथों में आ जाती है, फलस्वरूप उसके अन्दर बहुत प्रकार की वहमपरस्ती व दिखावा आ जाता है तथा जो परमात्मा के नाम का और सत्य का उपदेश है वह एक तरफ ही रह जाता है। फिर तो वे किताबें लिखने वालों की बातों को मानने लग पड़ते हैं, यही कारण है कि आप सारे धर्मों को पढ़कर देख लो, उनकी खोज करके देख लो, आपको एक आडम्बर व भेष मात्र ही दिखाई पड़ेगा। जब धर्म बिल्कुल ही अलोप हो जाता है तो फिर किसी महात्मा को आना पड़ता है। अतः इस प्रकार से आप एक बात समझाते हैं कि 'जह जह पेखउ तह हजूरि दूरि कतहु न जाई।।' (अंग - 677) लेकिन यह बात हमारे विश्वास में ही नहीं आ पाती है। हम मानते ही नहीं हैं कि परमात्मा मेरी बात को सुनता है और मेरे साथ ही रहता है। हम लोग बिल्कुल भी इस बात को नहीं मानते हैं। जब हम इस बात को मानते ही नहीं है तो फिर गुरू के साथ हमारा सम्बन्ध ही क्या रह गया है? जब हम उसकी बात ही नहीं मानते हैं और उस पर तर्क करते हैं कि नहीं हमारे साथ तो कोई भगवान नहीं रहता है और हम अपनी दलीलें देते हैं तो फिर हमारा सम्बन्ध उसके साथ बन ही नहीं पाता है।

साधु संगत जी! हमारी हालत इस प्रकार की बनी हुई है। यदि पूरा गुरू हमें मिल जाए और वह हमारे ऊपर कृपा करके हमें यह चीजें समझाए तब कहीं विश्वास बन पाया करता है अन्यथा यह विश्वास बन ही नहीं पाता है। इसीलिए गुरू जी फुरमान करते हैं कि -

कबीर साचा सतिगुरु किआ करै जउ सिखा महि चूक॥
अंधे एक न लागई जिउ बाँसु बजाईऐ फूक॥

अंग - 1372

असंख्य पाठ किए जा रहे हैं कोई आखण्ड पाठ कर रहा है, कोई किसी प्रकार का पाठ कर रहा है, लेकिन कोई फर्क पड़ता है? मनमुख की निन्दा करते रहते हैं कि यह मनमुख है और स्वयं को गुरुमुख कहते रहते हैं जबकि दोनों एक ही पंक्ति पर खड़े हैं तथा दोनों ने एक दूसरे की तरफ पीठ की हुई है लेकिन दोनों ही एक भी कदम आगे नहीं बढ़ाते हैं। कोई भी तरक्की नहीं कर रहा है। अतः जब हम गुरसिक्खों के जीवन पढ़ते हैं, उनकी विचार करते हैं तो हमें पता चलता है कि हमें किस प्रकार से चलना चाहिए, किस प्रकार से जीवन व्यतीत करना चाहिए।

गुरू दसवें महाराज जी के समय एक बहुत ही भला पुरुष रहता है, जिसके दो बच्चे हैं तथा उसकी धर्मपत्नी है जो कि अत्यन्त सुशील व हर समय सहयोग करने वाली है, प्यार करने वाली है। वह कभी भी क्लह-क्लेश नहीं करती है, जिसके फलस्वरूप उसका मन प्रत्येक समय शान्त रहता है। अतः दोनों बहुत प्यार से रहते हैं तथा धन सम्पदा भी उनके पास पर्याप्त है, उनका व्यवसाय वैद्य का है और समाज में उनका सम्मान भी पर्याप्त है। लेकिन उसे पता है कि मेरे अन्दर कुछ न कुछ खालीपन है, उल्लास नहीं है। वह सोचता रहता है कि मेरे अन्दर खुशी क्यों नहीं आती है? धन भी खूब है, बच्चे आज्ञाकार हैं, पत्नी सुशील है, समाज में इज्जत है, चार लोग इज्जत देते हैं, जब मैं किसी तरफ से गुजरता हूँ तो लोग हाथ जोड़कर नमस्कार करते हैं, फिर कारण क्या है कि अन्दर उल्लास नहीं है? कोई न कोई कमी तो है। उस समय वह अपनी जान पहचान वाले एक व्यक्ति से बात करता है, जो कि कवि है और गुरू दशमेश के दरबार के साथ जुड़ा हुआ है कि ऐ मित्र! मुझे घर में तंगी कोई नहीं है, सारे सुख मेरे पास हैं। एक गृहस्थी को जो सुख मिल सकते हैं, वह सारे सुख मेरे पास हैं लेकिन मेरा मन शान्त नहीं हो पाता है। इसका कारण क्या हो सकता है? यह सवाल वैसे गुरवाणी में भी आता है। प्यारपूर्वक पढ़ो -

धारना - किंतु बिध मन धीरे जी,
बिनु हरि नाम न शाँत होए।

सुंदर सेज अनेक सुख रस भोगण पूरे ॥
ग्रिह सोइन चंदन सुगंध लाइ मोती हीरे ॥
मन इछे सुख माणदा किछु नाहि विसूरे ॥
सो प्रभु चिति न आवई विसटा के कीरे ॥
बिनु हरि नाम न साँति होइ किंतु बिधि मनु धीरे॥

अंग - 707

पता नहीं लगता है कि किस चीज की कमी मेरे अन्दर है क्योंकि वे सब चीजें, जो दुनियादारों के पास होती हैं, वे मेरे पास भी हैं। इस प्रकार से वह अपने उस कवि मित्र को पूछ रहा है कि मित्र! कृप्या मुझे इसका कारण व हल बतलाओ?

वह कहने लगा, मित्र! तुमने कोई साधन भी किया है?

उसने कहा, हाँ मैंने राजयोग, जिसे कि अष्टांग योग भी कहते हैं, किया है। दरअस्ल राजयोग भी बहुत बड़ी बात है, पतंजलि ऋषि ने इसे अपनाया था। वह इसे बहुत ऊँचाई तक लेकर गया। दो चार सीढ़ियाँ नीचे रहने के कारण वास्तविक मंजिल नहीं मिल पाई लेकिन वह बहुत ऊँचाई तक लेकर गया था। अब बात यह है कि समाधि तो आप लगा लोगे, चाहे दस साल की लगा लो, चाहे बीस या पचास साल की लगा लो। जैसे कि मैंने पहले बताया था कि जोगीपुरे में एक साधू था, योगी था, जिसकी उम्र गुरू जी ने 5,113 वर्ष की बताई है और जो अमृतसर सरोवर की खुदाई के समय निकला था। जिस मठ में वह बैठा था, उसके ऊपर दस-दस फुट मिट्टी चढ़ी हुई थी। अब हम लाखों वर्ष की समाधि भी कह सकते हैं लेकिन शान्ति तो उसे भी नहीं आई थी। गुरू पाँचवें महाराज जी को उस योगी ने कहा महाराज! मेरा मन शान्त नहीं हो पा रहा है क्योंकि जब भी मैं समाधि से उत्थान होता हूँ तो पुनः वहीं पर आ जाता है। इसी प्रकार से जोगीपुरे वाले योगी ने भी दशमेश जी को कहा था कि महाराज! मुझे अभी तक वह शान्ति नहीं आ पाई है जिसका उल्लेख शास्त्रों में किया गया है और जो सच्चिदानन्द की अवस्था है। क्या मेरी साधना में कोई कमी रह गई है? यह योग विद्या क्या है? यह हमारी गुरमति के साथ बहुत समानता रखती है, इस प्रकार से समझ लो कि मान लो रूहानियत के 98 डंडे हैं, तो 'गुरमति' और 'योग' दोनों 95 डंडे एक समान ही चलते हैं, बस हम लोग (गुरमति में) तीन डंडे इसके आगे और अधिक चढ़ते हैं, तब कहीं जाकर पूर्ण होते हैं। सबसे पहले होता है 'यम' जिन्हें हम मोटे-मोटे आन्तरिक नियम कह सकते हैं क्योंकि दो प्रकार के नियम व मर्यादाएँ होती हैं। एक तो वे होते हैं जिनका सम्बन्ध मन के साथ ज्यादा होता है, पाँचों ज्ञानेन्द्रियों के साथ ज्यादा होता है। जो यम है, इसका ज्यादा सम्बन्ध मन के साथ ही है। इसमें सबसे पहले आती है - अहिंसा। एक होती है हिंसा यानि कि दूसरे का नुक्सान करना। यह भी पांच प्रकार की होती है - मानसिक हिंसा, शारीरिक हिंसा, वाचक हिंसा, बौद्धिक हिंसा तथा अनुष्ठान हिंसा। पाँच प्रकार से हम दूसरों का नुक्सान करते हैं। जो मन्त्र सिद्ध करके यानि कि मन्त्र बल के द्वारा दूसरों का नुक्सान किया जाता है, उसे अनुष्ठान हिंसा कहते हैं। बुद्धि के बल के द्वारा किसी को गलत मार्ग पर डाल देना बौद्धिक हिंसा कहलाता है। मन के द्वारा दूसरे के नुक्सान के बारे में सोचते रहना मानसिक हिंसा होती है, इसी प्रकार अपनी वाणी के द्वारा कड़ुआ बोलना, दूसरों को गालियाँ निकालना, ताने देना आदि वाचक हिंसा की श्रेणी में आता है। जहाँ तक शारीरिक हिंसा की बात है तो किसी को धप्पड़ मारना, धक्का

मारना, किसी का गला घोंट देना आदि सब इस श्रेणी की हिंसा कहलाती है। अतः इन पाँचों नियमों का पालन करते हुए आन्तरिक तौर पर यह प्रार्थना करे कि -

नानक नाम चढ़दी कला
तेरे भाणे सरबत का भला।

जब यह अवस्था होगी तो फिर यह पूर्ण तौर पर अहिंसा धारण करने की बात कहलाएगी अन्यथा अहिंसा नहीं हो पाएगी।

दूसरा यम होता है 'झूठ' से दूर का भी वास्ता न हो यानि कि झूठ को तो अपनी जिन्दगी में आने ही न दे। न झूठी बात बोले न झूठी बात सोचे यानि कि किसी भी स्तर पर झूठ के अन्दर दाखिल न हो। तीसरा होता है चोरी न करनी। चोरी बहुत प्रकार की होती है। गुरू जी ने तो एक विशेष चोरी के बारे में भी कहा है, जिस चोरी के लिए तो हम सभी लोग अपराधी बनते ही हैं और इसके बारे में हमें कोई ध्यान ही नहीं है। महाराज जी लिखते हैं कि -

धारना - वड्डे उह चोर ने,
नाम ना जपदे जिहड़े।

जो नाम नहीं जपते हैं वे छोटे चोर नहीं बल्कि बड़े चोर हैं।

इस प्रकार चोरी बहुत प्रकार की होती है। किसी दूसरे के ख्यालों को नोट कर लेना और अपने बनाकर सुना देना, यह ख्यालों की चोरी होती है। किसी ने कविता लिखी हुई है, उसमें से ख्यालों के नोट करके और अपनी बना कर सुना देनी इसे कविता का चोर कहते हैं। इस प्रकार से महापुरुषों ने बहुत प्रकार की चोरी बतलाई है। इससे बचने का तरीका यही होता है कि उस घटना को सुनाते समय कहो कि अमुक महापुरुष इस प्रकार से बताया करते थे, ऐसे नहीं कि अपनी बनाकर बता दो। यदि लिखते हो तो उसका विवरण दो कि हमने अमुक व्यक्ति की लिखित में से ली है क्योंकि जब ख्याल उसका है तो क्रेडिट भी उसी को जाना चाहिए, अन्यथा चोरी लगती है। कानून तो अपने हिसाब से काम करता है, लेकिन नाम सिमरन में भी यह चीज बाधा डालती है। अतः चोरी रहित जीवन होना चाहिए।

इसके बाद आता है 'सत्य का जीवन'। सत्य की बात करनी। सत्य के बीच रहना, सत्य का ध्यान धरना, सत्य का जीवन जीना। इसके आगे होता है - धैर्य। धैर्यवान बनना, उतावले नहीं होना। फिर आता है क्षमा प्रदान करने वाला होना। व्यक्ति भूल जाता है, गलती कर जाता है लेकिन यदि फिर आकर कहता है कि मुझसे गलती हो गई है तो उसे क्षमा कर देना। क्षमा करने वाले का बहुत सम्मान होता है, यहाँ भी और दरगाह में भी। फिर आती 'दया'। जब तक हमारे अन्दर दया का भाव नहीं आता है, तब तक हमारे अन्दर धर्म का उत्पन्न होना नामुमकिन है -

धौलु धरमु दइआ का पूतु ॥ *अंग - 3*

जो बकरों को काट-काट कर खाता है क्या उसके अन्दर दया का भाव है? गुरू जी कहते हैं ऐ भोले व्यक्ति! तुम अन्य लोगों को धोखा क्यों देते हो? तुम सीधा कहो कि मैंने माँस खाना है। इसके साथ ही तुम इसका बदला देने के लिए भी तैयार हो जाओ -

कबीर खूबु खाना खीचरी जा महि अंम्रितु लोनु ॥
हेरा रोटी कारने गला कटावै कउनु ॥ *अंग - 1374*

कबीर जी कहते हैं कि पहले तो हम जानवरों को मार कर खाएँ, उसके बाद हम उनसे अपना गला कटवाएँ। इससे तो अच्छा यही है हम सादा भोजन ही खा लें। दूसरी तरफ यदि तुम माँस खाने के पक्ष में ही दलीलें देने लगोगे फिर तो मुश्किल है। कबीर जी कहते हैं कि -

जीअ बधहु सु धरमु करि थापहु
अधरमु कहहु कत भाई ॥
आपस कउ मुनिवर करि थापहु
का कउ कहहु कसाई॥ *अंग - 1103*

जीवों को मार कर तुम कहते हो कि मैं तो इनके ऊपर दया करता हूँ, मैं धर्म का काम करता हूँ।

जीवों को मारना दया का काम है?

जवाब देता है कि मैं तो इनकी योनियों को भुगता रहा हूँ।

गुरू जी कहते हैं कि ऐ मूर्ख व्यक्ति! जब तक तुम्हारे अन्दर से हउमै का नाश नहीं हुआ है और तुम परम निजत्व से एकत्व नहीं प्राप्त कर सके हो तब तक तो तुम अपने द्वारा किए गए कार्यों से बँधते जा रहे हो और तुम्हें इन सब कुकृत्यों का लेखा देना पड़ेगा, तुम पाप के भागी बनोगे। तुमने तो पापों को बो लिया है। बात तो तुम उन महापुरुषों की करते हो जो सचमुच उद्धार करने में समर्थ हैं। यदि श्री गुरू गोबिन्द सिंह महाराज जी ने पांवटा साहिब में शेर को मारकर उसे मुक्त किया तो बतला दिया कि यह जयद्रथ था। यदि छठे महाराज जी ने आगरा में शेर को मारा तो बता दिया

कि जहाँगीर! यह तुम्हारा चाचा कासिम बेग है। क्या तुम इससे बात करनी चाहोगे?

जहाँगीर बोला, हाँ महाराज जी!

गुरू जी ने कहा, फिर पूछो इससे कि यह शेर क्यों बन गया?

जब जहाँगीर ने पूछा तो वह (शेर) बोला, जहाँगीर! मैं तुम्हारे अब्बाजान के साथ तीसरे गुरू महाराज जी के पास गया था। वहाँ पर तुम्हारा पिता पंक्ति में बैठकर भोजन करने लग गया लेकिन मैंने शरह के सन्दर्भ में उसे बहुत बुरा-भला कहा तथा गुरू घर पर भी तर्क की तथा मैंने वहाँ पर बना लंगर भी ग्रहण नहीं किया। तर्क का फल यह हुआ कि रात को जब मैं माँस वाला भोजन करने लगा तो उस समय मेरे गले में माँस का टुकड़ा फँस गया और वह श्वास नली में चला गया, फलस्वरूप मेरी वहीं पर मृत्यु हो गई। दूसरी तरफ मैंने गुरू जी के दर्शन भी किए थे, भले ही मैंने तर्क भी की थी, लेकिन फिर दर्शनों का लाभ तो मुझे मिलना ही था। इसका फल यह हुआ कि छठे गुरू महाराज जी ने मुझे, मेरी इस शेर की योनि से निजात करवा दी है यानि कि मेरे द्वारा किए गए उस अपराध से मुझे क्षमा दिलवा दी है और अब मैं मुक्त हो गया हूँ।

अतः ऐसे गुरुओं व पीरों की नकल हम कैसे कर सकते हैं? तुम यह कैसे कह सकते हैं कि मैं तो इन्हें, इनकी योनियों से छुड़वा रहा हूँ। पहले तुम अपनी योनि से तो छुटकारा पा लो, दूसरों को तो बाद में छुड़ाना।

जीअ बधहु सु धरमु करि थापहु अधरमु कहहु कत भाई॥ आपस कउ मुनिवर करि थापहु का कउ कहहु कसाई ॥

फिर कसाई का परिचय तुम किस प्रकार से दोगे? अतः जीवों पर दया करना अत्यावश्यक है।

राविया ने प्यासी कुतिया और उसके बच्चों पर दया की। उसने अपने सारे कपड़े फाड़ कर और उनकी एक रस्सी बनाकर तथा एक पल्लू को भिगो-भिगो कर उनकी प्यास बुझाई। इस्लाम के अन्दर इस बात का जिक्र आता है कि दरगाह के अन्दर उनकी दया स्वीकार्य हो गई। हुआ यूँ कि अब राविया के पास पहनने के लिए कोई भी वस्त्र शेष नहीं रह गया था, फलस्वरूप वह रेत के अन्दर गड्ढा खोदकर उसी में बैठ गई। उधर मक्का के अन्दर काबा साहिब का हज शुरू हो गया लेकिन हाजियों को काबा कहीं भी दिखाई नहीं पड़ता है। काजियों ने आवाज दी है, अल्लाहताला! काबा कहीं भी दिखाई नहीं दे रहा है? आवाज आई कि ऐ हाजियो! काबा तो राविया का हज करने के लिए गया हुआ है। वह तो राविया को दर्शन देने के लिए गया हुआ है। उन्होंने पूछा कि वह यहाँ से कितनी दूर है? आवाज आई कि यहाँ साठ कोस की दूरी पर काबा गया हुआ है। अतः तुम लोग भी वहाँ पर जाकर हज करो। इस प्रकार से इस्लाम के अन्दर बहुत ही प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटनाएँ हैं जो कि दया से सम्बन्धित हैं जो यह शिक्षा देती हैं कि दया करो क्योंकि परमात्मा के जीवों पर दया करने से परमात्मा प्रसन्न होता है।

अब ये मामूली बातें हैं, ये पक्षी बेचारे हैं, शहर के अन्दर दौड़े घूमते रहते हैं। इन्हें कुछ खाने को नहीं मिलता है, कोई परमात्मा का प्यारा इन्हें दाने डाल देता है। कोई परमात्मा का प्यारा देख लेता है कि इन्हें प्यास लगती है, वह पानी रख देता है, अतः यह सब दयाभाव होता है और यह भाव परमात्मा को अत्यन्त प्रसन्नता प्रदान करता है। इस प्रकार दयाभाव तो नितान्त आवश्यक भाव है। इसके बाद आता है कोमल चित्त का होना, किसी का बुरा न माँगना। यथाशक्ति दूसरों की मदद करनी -

जैसा बितु तैसा होइ वरतै अपुना बलु नही हारै ॥
अंग - 679

दूसरे की मदद करके उसका संकट दूर करना। इसी प्रकार से अगला है - अल्पाहार। मर्यादानुसार भोजन ग्रहण करना। इसी तरह से है - शौच यानि कि पवित्रता, मन की पवित्रता, ख्यालों की पवित्रता, शरीर की पवित्रता, अपने वातावरण की पवित्रता, मोहल्ले की पवित्रता, शहर की पवित्रता, बुद्धि की पवित्रता, जीवात्मा की पवित्रता, वस्त्रों की पवित्रता। इन सबको यम कहते हैं।

दूसरी मर्यादा होती है - नियम। इसमें पहले आती है - सेवा। दूसरा है - सन्तोष। आँखों का सन्तोष -

पर त्रिअ रुपु न पेखै नेत्र ॥ अंग - 274

कानों का सन्तोष -

करन न सुनै काहू की निंदा ॥ अंग - 274

हाथों का सन्तोष - हाथों के द्वारा किसी का बुरा न करना, पैरों का सन्तोष - बुरी जगह पर चलकर न जाना।

तीसरा होता है वाहिगुरू जी पर विश्वास रखना। यह

समझना कि वाहिगुरू मेरे साथ में ही है। इसके बाद आता है, अपनी उचित कमाई में से परमात्मा के नमित्त दान निकालना क्योंकि उसकी कृपा से ही हम कमा रहे हैं, यदि परमात्मा नाराज हो जाए, शरीर बीमार हो जाए, फिर कैसे कमा लोगे? इसके बाद आती है - पूजा। मर्यादापूर्वक बैठकर नित्तनेम करना, पूरी श्रद्धा भावना से नित्तनेम करना, पाखण्ड से दूर रहना और शान्त स्वभाव में रहना, झूठी तथा निरर्थक बातों से दूरी बनाकर रखना और अतिथि सेवा को तरजीह देना।

तीसरा होता है - आसन। एक जगह को निश्चित कर लेना कि मैंने यहाँ पर बैठकर भजन करना है। कोई गद्दी ले लो, चौकी ले लो और उसके ऊपर सीधे बैठकर भजन-बन्दगी करनी। रीढ़ की हड्डी का सीधा रहना श्रेयस्कर होता है। इस विधि से नींद भी नहीं आती है, ख्याल भी नहीं आते तथा शरीर सावधान बना रहता है। जब हम नित्य प्रतिदिन एक ही जगह पर बैठते हैं तो वातावरण पूर्णतः शुद्ध हो जाता है। ऐसे बहुत सारे प्रेमीजन हैं जो कि जगह को देखकर ही बतला देते हैं कि इस जगह पर अवश्य कोई बुरा व्यक्ति बैठा होगा। जो नाम सिमरन करने वाले लोग हैं, उन्हें एकदम पता चल जाता है कि आज मैं जिस घर में ठहरा हुआ हूँ, वहाँ पर भजन बन्दगी के अन्दर मेरा मन अनायास ही लगता जा रहा है, अथवा आज मेरा मन भजन-बन्दगी में बिल्कुल भी नहीं लग रहा है। यही कारण है कि जिन स्थानों पर गुरुओं के चरण पड़े हुए हैं, उन्हें हम आज भी नमस्कारें करते हैं। वे पूर्णतः पवित्र होते हैं।

एक बार शिव जी महाराज पार्वती के साथ चले जा रहे हैं। आप महापुरुषों को ढूँढ़ते घूम रहे हैं। गुरवाणी के अन्दर भी ऐसा फुरमान आता है कि ये जो बड़े-बड़े देवते होते हैं ये भी महापुरुषों के दर्शन करने के लिए लालायित रहते हैं-

धारना - शिव जी खोजदे फिरदे, ब्रहमगिआनी नूं।

ब्रहम गिआनी कउ खोजहि महेसुर ॥
नानक ब्रहम गिआनी आपि परमेसुर ॥ अंग - 273

शिव जी, महापुरुषों को क्यों खोजता है? गुरवाणी के अन्दर इसका जवाब लिखा हुआ है। गुरू जी कहते हैं कि परमात्मा जो है, वह देवताओं को दिखाई नहीं पड़ता है। उन्हें परमात्मा के दर्शन हो ही नहीं पाते हैं। उनके पास परमात्मा की आवाज का सन्देश तो पहुँच जाता है लेकिन प्रत्यक्ष दर्शन नहीं हो पाते हैं। मोहम्मद साहिब तथा ईसा जी को जब परमात्मा का सन्देश प्राप्त हुआ तो वह फरिश्तों के माध्यम से हुआ, देवताओं के माध्यम से हुआ। उन्होंने कहा कि परमात्मा ने मुझे यह सन्देश आपको बताने के लिए कहा है कि मैं तुम्हें यह बतला दूँ। भारतवर्ष के ऋषियों-मुनियों को, गुरुओं-पीरों को जो सन्देश प्राप्त हुआ वह सीधा वाहिगुरू जी या परमात्मा जी से प्राप्त हुआ है क्योंकि गुरू नानक देव महाराज जी कहते हैं कि -

हउ आपहु बोलि न जाणदा
मै कहिआ सभु हुकमाउ जीउ ॥ अंग - 763

मुझे तो कुछ भी पता नहीं है, बस मुझे तो ऊपर से हुक्म आता है -

जैसी मै आवै खसम की बाणी ॥ अंग - 722

मुझे तो जो परमात्मा के पास से हुक्म आता है, उसे मैं आप लोगों को बता देता हूँ। अतः यह फर्क है। महाराज जी कहते हैं -

एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु ॥
इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु ॥
जिव तिसु भावै तिवै चलावै जिव होवै फुरमाणु ॥
ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु॥
अंग - 7

कमाल की बात है कि संसार का सारा कार्य वे (तीनों मुख्य देवता) करते रहते हैं लेकिन उन्हें परमात्मा के दर्शन नहीं हो पाते हैं। दूसरी तरफ जो ब्रह्मज्ञानी महापुरुष हैं जो परमात्मा का रूप ही बन गए हैं और जो मनुष्य शरीर को धारण किए हुए हैं, उन्हें सदैव ही परमात्मा के दर्शन होते रहते हैं। यथा -

जिना न विसरै नामु से किनेहिआ ॥
भेदु न जाणहु मूलि साँई जेहिआ ॥ अंग - 397

धारना - साँई ही वरगे ने,
विसरे ना नाम जिनाँ नूं।

परमात्मा और इस प्रकार के महापुरुषों में कोई भी फर्क नहीं हुआ करता है, यही कारण है कि वे देवता लोग स्वर्ग लोकों में से आकर ब्रह्मज्ञानी महापुरुषों के माध्यम से परमात्मा के दर्शन करते हैं यानि कि महात्मा के बीच से वे परमात्मा के दर्शन करते हैं।

बिनु भागा सतसंगु न लभै .....।।

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

मेरे मन जपि गुर गोपाल प्रभु सोई ॥
जा की सरणि पइआँ सुखु पाईऐ
बाहुड़ि दूखु न होई ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
वडभागी साधसंगु परापति
तिन भेटत दुरमति खोई॥
तिन की धूरि नानकु दासु बाछै
जिन हरि नामु रिदै परोई ॥ 2 ॥ 5 ॥ 33 ॥

अंग - 617

परम सम्माननीय गुरू प्यारी साधु संगत जी! आओ! ख्यालों को बाहर जाने से रोकें और चित्त-वृत्तियों को एकाग्र करते हुए रसना की पवित्रता के लिए सारे ही उच्चारण करो जी, सतिनाम श्री वाहिगुरू।

काफी लम्बे समय से आप सब कीर्तन का रसास्वादन कर रहे हैं -

सतसंगति कैसी जाणीऐ ॥
जिथै एको नामु वखाणीऐ ॥ ***अंग - 72***

बिनु भागा सतसंगु न लभै
बिनु संगति मैलु भरीजै जीउ ॥ ***अंग - 95***

अच्छे भाग्यों के बिना सत्संग में पहुँच पाना असम्भव है और सत्संग के बिना हमारे हृदय के अन्दर मैल पड़ जाती है। हमारे अन्तःकरण में कितनी मैल पड़ी हुई है, इस बारे में गुरू जी का फुरमान है -

जनम जनम की इसु मन कउ मलु लागी
काला होआ सिआहु ॥
खंनली धोती उजली न होवई
जे सउ धोवणि पाहु ॥ ***अंग - 651***

लेकिन सत्संग में आकर -

गुन गावत तेरी उतरसि मैलु ॥
बिनसि जाइ हउमै बिखु फैलु ॥ ***अंग - 289***

सत्संग में आकर ही यह मैल दूर होती है। आप लोग भाग्यशाली हो जो कि अपने कामकाजों को त्याग कर तथा रात्रि के आलस्य को दूर करते हुए गुरू चरणों में उपस्थित हुए हो क्योंकि यदि बहुत ही अच्छे भाग्य हों तभी सत्संग की प्राप्ति हो पाया करती है।

वडभागी साधसंगु परापति
तिन भेटत दुरमति खोई ॥
तिन की धूरि नानकु दासु बाछै
जिन हरि नामु रिदै परोई ॥ ***अंग - 618***

जो लोग सत्संग में नहीं आ पाए हैं, इसमें उनका दोष नहीं है बल्कि उनके कर्मों का दोष है। जब तक संचित कर्म, शुभ कर्म फल देने के लिए तैयार न हों, तब तक वे सत्संग में आ ही नहीं सकते हैं। अतः आप सभी उत्तम भाग्य वाले हो जो कि सत्संग में आकर गुरू चरणों में हाजिर हुए हो। दो ही पक्ष हैं। एक है - सत्संग और दूसरा है कुसंगत। कुसंगत तो बिना भाग्य से भी प्राप्त हो जाती है क्योंकि नीची जगह को तो पानी स्वतः ही चला जाता है जबकि ऊँची जगह को ले जाने के लिए प्रयत्नशील होना पड़ता है। इसी प्रकार से सत्संग की सौभाग्य घड़ियों का प्राप्त होना बहुत ही अच्छे भाग्यों की निशानी हुआ करती है।

कबीर एक घड़ी आधी घरी आधी हूं ते आध ॥
भगतन सेती गोसटे जो कीने सो लाभ ॥

अंग - 1377

एक घड़ी साढ़े चौबीस मिनट की होती है, उससे भी आधी और उससे भी आधी यानि कि जितना समय भी सत्संग मिल जाए उसका लाभ ही लाभ है -

संतसंगि अंतरि प्रभु डीठा ॥
नामु प्रभू का लागा मीठा ॥ ***अंग - 293***

सत्संग, 'नाम' के साथ जोड़ देता है, अन्यथा होता क्या है -

अंम्रितु कउरा बिखिआ मीठी ॥
साकत की बिधि नैनहु डीठी ॥ ***अंग - 892***

दूसरी तरफ कुसंग है, जिसके बारे में तो कुछ कहने की भी जरूरत नहीं है। कुसंगत क्या करती है? गुरू जी का फुरमान है -

कबीर संगति करीऐ साध की अंति करै निरबाहु ॥
साकत संगु न कीजीऐ जा ते होइ बिनाहु ॥

अंग - 1369

ये दो ही पक्ष हैं, एक कुसंग है और दूसरा सत्संग है।

मेरे माधउ जी सतसंगति मिले सु तरिआ ॥

अंग - 10

यदि एक घड़ी का सत्संग मिल गया, थोड़ा सा समय भी सत्संग मिल गया -

एक चित जिह इक छिन धिआइओ
काल फास के बीच न आइओ। अकाल उसतति

सत्संग का तो लाभ ही लाभ है और दूसरी तरफ -

कबीर चावल कारने तुख कउ मुहली लाइ ॥
संगि कुसंगी बैसते तब पूछै धरम राइ ॥
अंग - 1375

यदि कुसंगत में बैठता है, फिर तो नुक्सान होना अवश्यम्भावी है। भूसा, चावल के साथ लगा हुआ होता है, इसीलिए जब चावल को मोहला लगता है तो फिर भूसे को संगत के कारण स्वाभाविक रूप से लगता ही है, फलस्वरूप उसे भी तकलीफ उठानी पड़ती है -

धरम राइ नो हुकमु है बहि सचा धरमु बीचारि ॥
अंग - 38

वह पापियों व पुण्य कर्म करने वालों से लेखा माँगता है। पुण्य करने वालों को वह स्वर्ग में भेजता है, जबकि पाप करने वालों को नर्क में भेजता है लेकिन जो साधू की संगत करता है -

कवनु नरकु किआ सुरगु बिचारा
संतन दोउ रादे ॥ अंग - 969

थोड़ा सा समय यदि सत्संग किया जाए तो उसका फल भी बहुत सारे तपों से भी अधिक हुआ करता है।

वशिष्ट जी कहते हैं कि सत्संग का फल अधिक है लेकिन विश्वामित्र जी कहते हैं तपस्या का फल अधिक है। दोनों में विवाद हो गया। अब महापुरुष ज्यादातर संवाद की तरफ बढ़ा करते हैं। वे ब्रह्मा, विष्णु व महेश तीनों देवताओं के पास जाते हैं और आखिर में शेषनाग जी के पास आ जाते हैं कि आप इस प्रश्न का उत्तर दो? वह बोला कि मेरे पास तो इन संवादों या विवादों के लिए समय नहीं है, पहले आप मुझे इसमें समय लगाने के बदले में फल दो, तभी मैं कुछ बता पाऊँगा -

धौलु धरमु दइआ का पूतु ॥
संतोखु थापि रखिआ जिनि सूति ॥ अंग - 3

नाम के धारे सगले जंत ॥
नाम के धारे खंड ब्रहमंड ॥ अंग - 284

जिस समय शेषनाग जी बात करने लगते हैं तो उस समय सारी धरतियाँ डोलने लग पड़ती हैं, अत: वे कहते हैं कि पहले आप लोग मुझे फल दो। विश्वामित्र ने हजारों वर्षों तक किए गए तप का फल शेषनाग को दिया लेकिन धरतियाँ डोलने से नहीं हटती हैं लेकिन जब विशिष्ठ जी ने एक घड़ी किए गए सत्संग का फल दिया तो सभी धरतियाँ स्थिर हो गईं। शेषनाग जी ने कहा कि अब तो आपको अपने सवाल का जवाब मिल ही गया होगा कि फल किसका अधिक है। एक तरफ हजारों वर्षों का तप और दूसरी तरफ एक घड़ी किए गए सत्संग का फल। यह मन को डोलने से बचा लेता है। इसीलिए सत्संग में -

प्रभ की उसतति करहु संत मीत ॥
सावधान एकागर चीत ॥ अंग - 295

कल्युग का समय है, थोड़ी सी चित्त की एकाग्रता भी बेशुमार फलदायक है। थोड़े समय का सत्संग भी जीवन को बदल कर रख देता है। धन्य गुरू अरजन देव महाराज जी ने सत्संग की बहुत अधिक प्रशंसा की है क्योंकि सत्संग के अन्दर नाम की महिमा गाई जाती है -

नाम की महिमा संत रिद वसै ॥
संत प्रतापि दुरतु सभु नसै ॥
संत का संगु वडभागी पाईऐ ॥
संत की सेवा नामु धिआईऐ ॥
नाम तुलि कछु अवरु न होइ ॥
नानक गुरमुखि नामु पावै जनु कोइ ॥ अंग - 265

नाम के साथ जुड़कर ही शान्ति है अन्यथा व्यक्ति भटकता ही रहता है। इस बात को सिद्ध करने वाले असंख्य उदाहरण मिलते हैं। प्यारे महापुरुष कितनी ही सीधी व स्पष्ट मिसालें देकर समझाते हैं। वे साखियों व प्रमाणों के द्वारा समझाने का प्रयत्न करते हैं -

सुणि साखी मन जपि पिआर ॥
अजामलु उधरिआ कहि एक बार ॥ अंग - 1192

अजामलु पापी जगु जाने निमख माहि निसतारा ॥
अंग - 632

एक आँख को झपकने जितने समय में ही महापुरुषों द्वारा बताई गई युक्ति के अनुसार उसका कल्याण हो गया। गनका पापिन ने इतने पाप कर्म कर लिए थे कि मानो उसने पापों के हार ही पिरो लिए थे, लेकिन महापुरुषों द्वारा बताई गई युक्ति के अनुसार वह सहज में ही मुक्त हो गई। क्योंकि-

आपि मुकतु मुकतु करै संसारु ॥
नानक तिसु जन कउ सदा नमसकारु ॥ अंग - 295

इसी प्रकार से यदि कुसंग मिल जाए तो व्यक्ति दूसरी तरफ पड़ जाता है। एक भाई मेहरू जी हुए हैं, वे कुसंगत के कारण बुरे कार्यों में लप्ति हो गए, फलस्वरूप उनके मुख्य कार्य हो गए पशुओं की चोरी करनी तथा अन्य बुरे कार्य करने लेकिन आज उनके पूर्वजन्म के अच्छे कर्म जागृत हो गए, फलस्वरूप वह गुरू जी के दरबार में आ गया। जो गुरू का दरबार होता है यह हमें शीशा दिखलाता है कि तुम कहाँ पर खड़े हो। धन्य गुरू अरजन देव महाराज जी सिंहासन पर बिराजमान हैं और भाई मेहरू जी ने आकर उन्हें नमस्कार की -

करि डंडउत पुनु वडा हे ॥ अंग - 13

उनका पूर्वजन्म का कोई कर्म जागृत हो गया,

फलस्वरूप वह गुरू दरबार में पहुँच गया। जिस समय वह पहुँचा तो उस समय गुरू जी इस प्रकार से नसीहत कर रहे हैं -

चोर की हामा भरे न कोइ ॥
चोरु कीआ चंगा किउ होइ ॥ ***अंग - 662***

यदि हम कहें कि हम चोर नहीं हैं तो यह गलत है क्योंकि हम लोग तो बहुत बड़े चोर हैं, महाराज जी कहते हैं कि असली चोर तो वे हैं जो नाम नहीं जपते हैं। यथा -

ते तसकर जो नामु न लेवहि
वासहि कोट पंचासा ॥ ***अंग - 1328***

गुरू पातशाह जी के वचन आ रहे हैं -

परथाइ साखी महा पुरख बोलदे
साझी सगल जहानै ॥ ***अंग - 647***

सतगुरू जी के जो वचन होते हैं वे नुकीले तीरों के सदृश्य होते हैं, वे तो भरे हुए कारतूस होते हैं, जो कि गहरे घाव कर जाते हैं।

इसने नमस्कार की। जब उसने गुरू चरणों पर से अपना शीश उठाया तो कानों में आवाज पड़ी कि ऐ भद्रपुरुष! तुम तो असली चोर हो, जब वह संगत में बैठ गया तो उसे गुरू जी के वचनों के बाण चारों तरफ से बजने लग पड़े जो कि उसके हृदय को छलनी करते जा रहे हैं। इसके साथ ही इस प्रकार के वचन भी आ रहे हैं कि काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकारा। चोर कहीं दूर नहीं बैठे हुए हैं बल्कि वे तो अन्दर बैठे हुए हैं -

इसु देही अंदरि पंच चोर वसहि
कामु क्रोधु लोभु मोहु अहंकारा ॥
अंम्रितु लूटहि मनमुख नही बूझहि
कोइ न सुणै पूकारा॥ ***अंग - 600***

अन्दर तो पाँच बैठे हुए हैं। काम को ही देख लो -

हे कामं नरक बिस्रामं बहु जोनी भ्रमावणह ॥
अंग - 1358

यह सोए हुए पर भी वार करता है। व्यक्ति सोया हुआ है लेकिन सपने में भी यह दोषी बना देता है। यह अमृत को लूटता रहता है इसीलिए जहाँ काम है, वहाँ नाम नहीं है, लेकिन जब नाम में स्थिति हो गई तो फिर स्वयं ही चित्त वशीभूत हो जाता है। इसी प्रकार से क्रोध है, क्रोध का कोई पता नहीं है कि यह कब आ जाए। कितना नुक्सान करता है क्रोध?

कामु क्रोधु काइआ कउ गालै ॥
जिउ कंचन सोहागा ढालै ॥ ***अंग - 932***

इस प्रकार से यह व्यक्ति काम और क्रोध में अत्यधिक लीन हो जाता है। इसकी जड़ है, लोभ कि मुझे यह मिल जाए यदि न मिले तो फिर क्रोध आएगा। कामनाएँ जागृत होती हैं, वासनाएँ प्रबल होती हैं। यदि इन पर कुछ हद तक जीत हासिल भी कर लो तो फिर अहंकार आ जाएगा, मोह में फँस जाएगा।

पुत्र कलत्र गिरसत का फासा ॥
होनु न पाईअै राम के दासा ॥ ***अंग - 180***

इस प्रकार यह बहुत ही कठिन मार्ग है। यही कारण है कि गुरू नानक पातशाह जी बहुत ही सरल नाम का मार्ग लेकर आए लेकिन जो ये चोर हैं इनकी तरफ मन प्रेरित होता रहता है। इस दृष्टि से मन के सदृश्य कोई दुश्मन भी नहीं है-

.....मनि जीतै जगु जीतु ॥ ***अंग - 6***

दूसरी तरफ यदि यह सहयोगी बन जाए तो इसके समान कोई दूसरा मित्र भी नहीं है यथा -

ममा मन सिउ काजु है मन साधे सिधि होइ ॥
मन ही मन सिउ कहै कबीरा
मन सा मिलिआ न कोइ ॥ ***अंग - 342***

इसके आगे ठगों की गिनती है। वे भी पाँच ही हैं। इसी प्रकार पाँच विषय हैं - शब्द, स्पर्श, रूप, रस व गन्ध। पाँच ठगों के बारे में गुरू जी फुरमान करते हैं -

राजु मालु रुपु जाति जोबनु पंजे ठग ॥
एनी ठगीं जगु ठगिआ किनै न रखी लज ॥
अंग - 1288

इनके द्वारा ठगा हुआ इन्सान उठ कैसे सकता है?

इस प्रकार जब नमस्कार करके भाई मेहरू उठा तो उसके कानों में आवाज पड़ी कि मैं तो यही समझता था कि चोरी करना बुरा कर्म है लेकिन यहाँ तो बहुत ही भयानक वचन आ रहे हैं। वह संगत में बैठकर वचन सुन रहा है। इसके बाद पातशाह कहने लगे कि जब तक हम सिक्खी के नियमों व मर्यादाओं का पालन नहीं करते हैं -

विणु गुण कीते भगति न होइ ॥ ***अंग - 4***

सम तथा दम दो प्रकार के नियम होते हैं। सम होते हैं तन के नियम और दम होते हैं मानसिक नियम। बहिरंग साधन तो हम लोग करते ही हैं लेकिन अंतरंग साधनों के बारे में सत्संग में ही पता चलता है।

इस प्रकार भाई मेहरू कहने लगा कि मेरा तो सब कुछ ही लूटा जा रहा है। मैं तो बहुत अधिक पाप कर्म कर रहा हूँ। साथ ही यह भी वचन आ रहे हैं कि जिनके लिए सारी जिन्दगी लगा दी वे तो साथ में जाने वाले नहीं हैं और कर्मों का फल तो स्वयं ही भोगना पड़ेगा -

अहि करु करे सु अहि करु पाए
कोई न पकड़ीअै किसै थाइ ॥ ***अंग - 406***

अब फलों को भोगने के समय तो किसी ने भी सहयोग नहीं करना है -

जह मात पिता सुत मीत न भाई ॥
मन उहा नामु तेरै संगि सहाई ॥ *अंग - 264*

नाम की तरफ तो चले ही नहीं और जिस तरफ दिन रात लगे हुए हैं, उसने तो हमारे साथ नहीं जाना है। इस प्रकार अब गुरू जी का अमोघ बाण सीधा भाई मेहरू जी को आकर लगा। गुरू जी ने फुरमाया कि -

कबीर दीनु गवाइआ दुनी सिउ दुनी न चाली साथि ॥
पाइ कुहाड़ा मारिआ गाफलि अपुनै हाथि॥
अंग - 1365

अब इस प्रकार के बाण बज रहे हैं कि जिनके लिए तुम दिन-रात उल्टे सीधे कार्य करते रहते हो क्या वे तुम्हारे साथ जाएँगे? अब भाई मेहरू को अपने द्वारा किए गए सारे पाप कर्म आगे खड़े हुए दिखाई दे रहे हैं। यथा -

बहु परपंच करि पर धनु लिआवै ॥
सुत दारा पहि आनि लुटावै ॥ 1 ॥
मन मेरे भूले कपटु न कीजै ॥
अंति निबेरा तेरे जीअ पहि लीजै ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
छिनु छिनु तनु छीजै जरा जनावै ॥
तब तेरी एक कोई पानीओ न पावै ॥ 2 ॥
कहतु कबीरु कोई नही तेरा ॥
हिरदै रामु की न जपहि सवेरा ॥ *अंग - 656*

अब वह उठकर खड़ा हो गया और गले में पल्लू डालकर विनती करने लगा कि हे महाराज जी! मैंने तो बहुत अधिक पाप कर्म किए हैं और मुझे तो आज पता चला है कि इनका फल कितना दुखदाई है। अब मेरे ऊपर आप कृपा करो कि मैं क्या करूँ? गुरू जी कहने लगे कि तुमने जिनके घरों में चोरी की है, उन्हें, उनका धन लौटा दो और जिनका पशुधन चुराया है, उनके पशुओं को लौटा दो।

अब वह घर आ गया और बिल्कुल बदल चुका है, सारे पशुओं को खोलकर ले गया और बाबा नौध सिंह के घर पर बाँध आता है। बाबा जी के जानवर चरने के लिए गए हुए थे लेकिन जब बाबा जी वापिस लौटते हैं तो वे देखकर हैरान हो जाते हैं। कहने लगे, प्रेमीपुरुष! यह सब क्या है?

कहने लगा, महाराज जी! मैं भूला हुआ था, मेरे ऊपर कृपा कर दीजिए, मुझे क्षमा कर दीजिए। मैंने आपकी भैंस चुराई थी, यह सब उसी का परिवार है। मेरे गुरू बाबा जी ने अब मेरे नेत्र खोल दिए हैं और अब मैं पाश्चाताप कर रहा हूँ। बस ये सारे पशु आपके ही हैं।

बाबा जी कहने लगे, इनका पालन पोषण तो तुमने किया है तो फिर ये मेरे कैसे हुए? ऐसा नहीं होगा।

वे बोले चलो हम लोग गुरू के दरबार में ही चलते हैं। भाई मेहरू संगत को अपने साथ लेकर गुरू की खुशियाँ लेने के लिए गुरू के दरबार में हाजिर हो गया।

तू चउ सजण मैडिआ डेई सिसु उतारि ॥
नैण महिंजे तरसदे कदि पसी दीदारु ॥ अंग - 1094

वैराग्यमयी अवस्था है और सारी संगत दिव्यानन्द में चल रही है -

चरन सरन गुरु एक पैंडा जाइ चल,
सतिगुरु कोटि पैंडा आगे होइ लेत है।
भाई गुरदास जी, कबि्त

सारी संगत गुरू दरबार में पहुँच जाती है और गुरू जी के दर्शन करती है -

तनु मनु होइ निहालु जा गुरु देखा साम्णे ॥
अंग - 758

सारी संगत का तन व मन ठंडा हो गया और गुरू जी ने सबको खुशियाँ प्रदान कर दीं। संगत के ऊपर दृष्टि डालकर गुरू जी ने सबके पाप नष्ट कर दिए। इसी प्रकार से यदि हम जागृत ज्योति श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के आगे अपना शीश श्रद्धापूर्वक झुकाएँगे तो क्या हमारे पाप नष्ट नहीं होंगे? जब संगत से आकर हम सत्संग श्रवण करते हैं, पंक्तियों में बैठकर लंगर ग्रहण करते हैं, तो कितनी संगत का भला होता है, सारे नगर-निवासी मिलकर सेवा करते हैं, तो इसका बहुत अधिक लाभ होता है और फिर कल्युग में ऐसा समय तो बहुत मुश्किल से प्राप्त हो पाता है। अतः तुम लोग बहुत ही भाग्यशाली हो जो कि सत्संग में चलकर आए हो और यहाँ पर गुरू जी हमें शीशा दिखला देते हैं -

पिछले अउगुण बखसि लए
प्रभु आगै मारगि पावै ॥ *अंग - 624*

गुरू जी हमारे अवगुणों को नहीं देखते हैं यदि वे हमारे अवगुणों को देखते हों तो -

लेखै कतहि न छूटीअै खिनु खिनु भूलनहार ॥
बखसनहार बखसि लै नानक पारि उतार ॥
अंग - 261

यह तो गरीब निवाज का, कृपा का द्वार है। इस प्रकार ये दो-तीन दिन हम लोगों को सत्संग के लिए प्राप्त हुए हैं। भाग्यशाली हैं वे प्रेमी जिन्होंने सेवा की है। दरअस्ल सत्संग के अन्दर बैठकर ही नाम के साथ जुड़ा जाता है अकेले तो नाम का जप कर पाना बहुत कठिन है, वैसे तो दो अढ़ाई घंटे बैठकर नाम सिमरन करने का विधान है लेकिन बैठना बहुत मुश्किल हो जाता है। लेकिन जब हम गुरू दरबार में आकर नाम सिमरन करते हैं तो मन स्थिर हो जाता है। अतः नाम के साथ जुड़ें, सेवा सिमरन करें। बस अब इतनी सी विनतियाँ स्वीकार करना।

वाहिगुरु जी का खालसा, वाहिगुरु जी की फतहि।

नूरानी मिलाप - 12

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

(श्री गुरू नानक देव जी महाराज जी के 550 वर्षीय प्रकाश शताब्दी को समर्पित)

मै मूरख की केतक बात है कोटि पराधी तरिआ रे॥
गुरु नानकु जिन सुणिआ पेखिआ से फिरि गरभासि न परिआ रे ॥ (अंग - 627)

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक मई, पृष्ठ - 36)

वह राजा भाग्यहीन जिसके राज में कलावान या किसी सिद्ध पुरुष पर सख्ती

तलवंडी के निवासियों में एक प्यार की मूर्ति राए बुलार जी हैं, जिनका परमात्मा के नूर श्री गुरू नानक साहिब जी के साथ असीमित प्यार है। प्यारी रूहें, अपने प्यारे का निरादर व अपने प्यारे पर सख्ती, को कदाचित बरदाश्त नहीं कर सकती हैं। इस प्रकार की घटना उस समय दिखाई पड़ी कि जब किसी ने राए बुलार जी को बतलाया कि (गुरू) नानक जी को अपने पिता के गुस्से का शिकार होना पड़ा है। उन्होंने (गुरू) नानक जी की पावन गालों पर चपतें तक लगा दीं और मामला केवल बीस रुपयों का था। यह रकम (गुरू) नानक जी के पिता श्री द्वारा उन्हें व्यापार हेतु दिए थे, लेकिन उन्होंने चूहड़काने में भूखे साधुओं को भोजन करवा दिया है।

इस प्रकार की वार्ता को सुनकर राए जी ने एकदम अपने मातहित लोगों को पिता मेहता कल्याणदास जी के घर को भेज दिया ताकि वह सारी वार्ता को अपने कानों द्वारा सुने व आँखों द्वारा देख सके। अब राए बुलार जी के मातहित कर्मचारी गुरू नानक साहिब जी को सम्मानपूर्वक लेने के लिए चले गए। इधर राए साहिब जी, जो कि सभा के अन्दर उदास मुद्रा में बैठे हुए थे, लम्बा सा श्वास भरते हुए बोले कि मेरी नगरी के अन्दर बहुत उपद्रव हो रहा है जो कलावान या किसी सिद्ध पुरुष पर तथाकथित सख्ती की जाती है। वह राजा भाग्यहीन है जिसकी नगरी में किसी सिद्ध पुरुष की कोई कद्र ही न हो।

इतनी देर में वे मातहित कर्मचारीगण उस परमात्मा के नूर गुरू नानक साहिब को अपने साथ लेकर पहुँच जाते हैं। उन्हें देखते ही राए साहिब अपने पलंग से उठे और प्यार में विह्वल होते हुए उन्होंने जगत पिता को अपने आलिंगन में ले लिया। प्यार भरे गले ने कुछ बोलना चाहा लेकिन आवाज प्यार के आगे मद्धम पड़ी हुई बाहर ही न निकल सकी। राए साहिब ने (गुरू) नानक को बहुत प्यार किया। पावन चेहरे पर पड़े हुए नीले निशानों को देखकर आप रोते ही जा रहे थे। किसी तरह से राए जी ने अपने आपको सम्भाला और नानक जी को अपने सिरहाने की तरफ सुशोभित करते हुए विनती की कि हे साईं जी के भेजे हुए परमात्मा के नूर! आप तो प्यार का सागर हो, मुझे क्षमा करो क्योंकि इस सारे उपद्रव के लिए मैं ही जिम्मेवार हूँ। बड़ी उम्र होने के बावजूद भी राए साहिब बच्चों की भांति सच्चे पातशाह जी से पिता वाला प्यार भी माँगते हैं तथा सेवकों वाली कृपा भी। इस प्यार भरे माहौल ने सारे वातावरण के अन्दर वैराग्य भाव को भर दिया।

उसी समय कुछ अन्य लोग, जिन्हें कि मेहता कल्याणदास जी को बुलाने भेजा था, लेकर आ जाते हैं। राए जी को, मेहता कल्याणदास जी को देखते ही उनके द्वारा किए गए उपद्रव के कारण काफी अफसोस हुआ लेकिन वह गुस्सा इतना प्रबल नहीं हो सका क्योंकि उससे पहले प्यार के सागर में गोते लगाने के कारण आप प्रतीति और वैराग्य में भीग चुके थे। फिर भी कुछ मीठी और नर्म-नर्म डाँट लगाते हुए राए जी ने मेहता जी को ताड़ना की कि यह आपने कौन सा चाँद चढ़ा दिया है? मेरी नगरी में आपने परमात्मा के नूर को चपतें लगाईं हैं? इस उपद्रव का तो मैं भी भागीदार बन गया हूँ। वह राजा भी दण्ड का भागीदार बन जाता है जिसके नगर में कोई सिद्धपुरुष दुखी होता है। आपने इन्हें बीस रुपयों के बदले में इतना मारा है? ये तो स्वयं सारी सृष्टि के स्वामी हैं। यदि तुम्हारे अन्दर पुत्र भावना ही है तो भी तुम्हारे घर एक ही पुत्र तो है? क्या तुम्हारे प्यार व मोह का यह रूप है? मैं तो मजबूर हूँ क्योंकि मुसलमान धर्म को मानने वाला हूँ, अन्यथा मैं इसे अपने ही घर रख लेता। मैं तो अब भी रख सकता हूँ, लेकिन इससे समाज के अन्दर जो तुम्हारी बदनामी होगी, वह भी मेरे लिए असहज होगी क्योंकि तुम्हारी

इज्जत भी मेरे लिए अहम है। अभी और भी बहुत कुछ राए साहिब कहना चाह रहे थे लेकिन उनके अन्दर क्रोध नेत्रों के माध्यम से आसुओं की धारा के रूप में बह कर निकल गया। बस आप इतना ही कह सके कि देखो कालू जी! कुछ होश करो।

इतने में पिता जी ने बोलने की हिम्मत की कि देखो! आप बड़े हो इसलिए मैं आपके सामने कोई बोलने का अधिकार तो नहीं रखता हूँ लेकिन आप मेरा दुख भी सुनो। बस वही दुख पिता जी ने सुनाना शुरू कर दिया जो कि आज के समय में सभी माता-पिता का होता है, जैसे कि ये दुनियादारी की परवाह नहीं रखते हैं, इन्हें कुछ धनोपार्जन करना चाहिए ताकि अगली पीढ़ियों में काम आ सके। मैं यही सोचता रहता हूँ कि इनकी अगली जिन्दगी कैसे चलेगी क्योंकि जीवन जीने के लिए धन की भी बहुत आवश्यकता पड़ती है। आप ही बताओ इस प्रकार से अपनी सारी पूँजी को गंवाने के बाद जब ये घर भी न आए और बाहर ही छिपे रहे तो फिर मुझे गुस्से का आना स्वाभाविक ही था।

पिता जी की बात को ध्यानपूर्वक सुनने के बाद राए साहिब बोले, बाबा जी! बिल्कुल नहीं, जगतनाथ के ऊपर तो गुस्सा कभी भी नहीं आना चाहिए। यदि तुम्हें धन की जरूरत है तो उसे मैं पूरी करूँगा। उसी समय आपने अपने मातहित कर्मचारी के माध्यम से रुपए मंगवाए और पिता जी के आगे रख दिए तथा कहा, उठा लो जितने चाहिए लेकिन आज के बाद मेरी नगरी में परमात्मा के रूप और परमात्मा के नूर पर कोई सख्ती नहीं करनी। तुम्हारे द्वारा की गई कण मात्र सख्ती भी मेरे लिए पर्वत के समान बड़ी गलती है। मैं कभी भी जगत पिता के लिए सख्ती को बरदाश्त नहीं कर सकता हूँ।

अब पिता जी का गुस्सा कम हुआ और आपकी आँखें बन्द हुई तथा (गुरू) नानक जी पुत्र होते हुए भी परमात्मा का नूर नजर आने लगे। जब नेत्र खुले तो पिता जी देखते हैं कि राए जी बैठे हुए हैं तथा लगभग दस लोग आस पास बैठे हुए हैं। अब मन, पुनः माया के मण्डल में आना शुरू हो गया। मन सोच रहा है कि यह बात तो ठीक है कि ये परमात्मा का नूर है लेकिन मेरे कहने के अनुसार तो पूरे नहीं उतरते हैं, ये धनोपार्जन तो बिल्कुल भी नहीं करते हैं। फिर सोचते हैं कि राए जी ने श्री गुरू नानक जी को अपने सिरहाने की तरफ बैठाया हुआ है, यह उनका बड़प्पन ही है, अन्यथा मेरे समेत सभी लोग नीचे चटाइयों पर ही बैठे हुए हैं। कभी मन में यह बात आती है कि यह मेरे पुत्र की बड़ाई के कारण भी हो सकता है, दूसरे ही क्षण मन में आता है कि नहीं राए जी तो वैसे ही कोमल दिल वाले इन्सान हैं और नानक जी को कलावान समझ कर चक्करों में पड़े हुए हैं। इस प्रकार से पिता मेहता कल्याण दास जी के मन पर यह पर्दा बना ही रहा।

अब मेहता कालू जी ने रुपए लेने से इन्कार कर दिया। राए जी ने पुनः कहा (गुरू) नानक जी मेरे सपुत्र हैं, हमारे लिए ये परमात्मा का रूप हैं और हम परमात्मा के देनदार हैं। मेरे पास जो कुछ भी धन-पदार्थ है, वह सब इन्हीं की कृपा के बदौलत है। आप ये पैसे ले लो क्योंकि हम देने वाले कहाँ हैं, यह तो बस नानक जी द्वारा प्रदत्त अनेकों उपहारों में से कणमात्र आपको भेंट कर रहे हैं। अब पिता जी थोड़ा मुस्कुराए और बोले, इसने तो गंवाना ही सीखा है लाभार्जन करना तो इसने सीखा ही नहीं है। आपने कब इनसे उधार लिया था जो अब आप लौटाना चाहते हो। इसके बाद राए जी सम्मानपूर्वक बोले -

सुन कालू तुझ को सुध नाही
माया जिती पिखहि जग माहीं
सभ वरतहि नानक अनुसारी
पति रजाइ जिउ पतिब्रत नारी।
संपत सरब तुरंग मतंगा।
सयंदन औ सुखपाल सुरंगा।
और जि मुझ घर सभ वडिआई,
कमल नैन करुना ते पाई ***(सूरज प्रकाश)***

पिता कालू जी यह सुनकर मुस्कुराए। यह वह मुस्कुराहट ही थी जो इस संसार को सदा से ही आती है। प्रतीति तथा विश्वास को यह संसार मजाक की हँसी में ही उड़ा देने की चेष्टा करता है। संसारिक प्राप्तियाँ चाहे जितनी मर्जी हों लेकिन ईश्वरीय विश्वास, ईश्वरीय प्रतीति सर्वोच्च व सच्ची है।

मेरी प्रीति गोबिंद सिउ जिनि घटै ॥
मै तउ मोलि महगी लई जीअ सटै ॥ ***अंग - 694***

ये तो दिलों के सौदे हैं। राए जी का परमात्मा के रूप गुरू नानक पातशाह जी के साथ दिल का सौदा था। पिता कालू जी को यह समझ आने में अभी प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। धन्य राए जी का प्यार और धन्य सतगुरू जी! प्यारे की कद्र पूछो राए बुलार जी को तथा बेबे नानकी जी को।

श्री गुरू नानक देव जी के 2019 में 550 वर्षीय मनाए जा रहे प्रकाश पर्व को समर्पित गुरू नानक वाणी पर आधारित श्रृंखलाबद्ध लेख श्री गुरू नानक देव जी की प्रमुख रचना 'आसा दी वार' में 'मानव संकट की चेतना'।

भाई नन्द लाल जी
गजलें

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक मई, पृष्ठ - 55)

बा हजर आशना शो गर तालिबि वसाली
रह कै बरी बमंजल ता राहबर न बाशद।

यदि तुम उसके मिलाप के लिए उतावले हो तो फिर बिछोड़े का वाकिफ भी बनो क्योंकि जब तक कोई मार्ग दिखाने वाला ही न हो, तब तक तुम किसी पड़ाव तक कैसे पहुँच सकोगे?

अै बुअलफजूल गोया अज इशकि उ मज्न दम
को पा नहद दरीं रहि आँ रा सरि नहि बाशद।

ऐ मूर्ख व्यक्ति! उसके प्यार की डींग न मारो, इस रास्ते पर तो वही पैर रख सकता है जिसकी धड़ पर सिर ही न हो।

गुलालि अफशानीए दसति मुबारिक
जमीनो आसमाँ रा सुरखरु करद।

उसके मुबारक हाथों ने गुलाल को छिड़क कर धरती व आसमान को लालो-लाल कर दिया है।

दो आलम गशत रंगीं अज तुफैलश
चू शाहम जामा रंगीन दर गुलू करद।

उसकी कृपा के द्वारा दोनों संसार रंगीन हो गए हैं क्योंकि उसने शाहूकारों की भांति मेरे गले में रंगीन कपड़े डलवा दिए हैं।

कसे कू दीद दीदारि मुक्दस
मुरादि उमर रा हासिल निको करद।

जिस किसी ने भी उसके पावन दर्शन किए हैं समझ लो कि उसकी सारी मानोकामनाएँ पूरी हो गई हैं।

शवद कुरबान खाकि राहि संगत
दिलि गोया हमीं रा आरजू करद।

संगत के मार्ग की धूल से कुर्बान हो जाया जाए बस मेरे दिल की तो यही तमन्ना है।

जिकरि वसफश बर जुबाँ बाशद लजीज
नामि ऊ अंदर दहाँ बाशद लजीज।

उसका यशगान करना जीव को बहुत ही अच्छा लगता है और जब उसका 'नाम' मुँह में आता है तो वह कितना स्वाद देता है।

चशमि मा रोशन जि दीदारि शुमा असत
जाँ निसारिश बसकि आँ बाशद लजीज।

तुम्हारे दीदार करके ही मेरी आँख रौशन है, मैं दीदार पर से कुर्बान जाता हूँ, वह कितना स्वाद भरा है?

जिकरि यादि ह्क कि ऊ बाशद लजीज
अज हमा मेवा कि बाशद लजीज।

परमात्मा की याद का जिक्र भी कितना स्वाद भरा होता है कि उसके सामने सारे मेवे भी फीके ही प्रतीत होते हैं।

आब-बखशी जुलमा आलम मे शवी
गर तुरा ईं आरजू बाशद लजीज।

यदि तुम्हें यह इच्छा, अच्छी लगती है तो फिर तुम सारे संसार को अमृत प्रदान करने वाला बन जाओगे।

बगैर इशकि खुदा हीच इशक काइम नीसत
बगैर आशिकि मोला हमा फनाह पिंदार।

परमात्मा के प्रेम के बिना अन्य कोई भी प्रेम पक्का नहीं है, इसलिए परमात्मा के प्यारों के अतिरिक्त तुम अन्य सब कुछ को नाशवान ही समझो।

बहर तरफ कि निगाहे कुनी रवाँ बखशी
निगाहि तुसत कि दर हर तरफ बवद जाँबार।

तुम जिधर भी निगाह करते हो, तुम उधर ही एक नई रूह प्रदान कर देते हो। यह तुम्हारी निगाह (दृष्टि) ही है जो कि चहुँओर जीवन की बरसात कर देती है।

खुदा कि दर हमा हालसत हाजरो नाजिर
कुजासत दीदा कि बीनद बहर तरफ दीदार।

परमात्मा तो प्रत्येक समय व प्रत्येक जगह पर सदैव हाजिर है लेकिन इस प्रकार की आँख कहाँ है, जो प्रत्येक तरफ उसका दीदार कर सके।

बगैर आरफि मौला कसे नजात न-याफत
अजल जमीनो जमाँ रा ग्रिफता दर मिनकार।

परमात्मा को जानने वालों के बिना अन्य किसी को

भी मुक्ति नहीं मिली है। मृत्यु ने तो धरती के समय को अपनी चोंच में पकड़ रखा है।

हमेशा जिंदा बवद बंदाइ खुदा गोया
कि गैर बंदगीअश नीसत दर अहाँ आसार।

ऐ गोया! परमात्मा का भक्त तो अमर हो जाता है क्योंकि उसकी बन्दगी के बिना संसार में अन्य किसी का भी कोई निशान नहीं है।

मन अज जवाँ कि पीर शुदम दर किनारि उमर
अै बा-तो खुश गुजशत मरा दर किनारि उमर।

मैं उम्र की गोद में जवान से बुड्ढा हो गया हूँ, तुम्हारी संगत में उम्र की गोद में मेरी जिन्दगी कितनी सुन्दर गुजरी थी।

दमहाइ माँदा रा तू चुनीं मुगतनम शुमार
आखिर खिजाँ बर आवुरद ईं नौ बहारि उमर।

शेष रहने वाले श्वासों को तुम इस प्रकार से सौभाग्यशाली समझो क्योंकि आखिर पतझड़ ने ही इस उम्र में बहार स्थापित की है।

हाँ मुगतनम शुमार दमे रा ब-जिकरि ह्क
चूं बाद मीरवद जि नजर दर शुमार उमर।

हाँ, उस घड़ी को भी सौभाग्यशाली समझो जो परमात्मा की याद में गुजरे क्योंकि उम्र का हिसाब लगाते समय यह हवा की भांति ही निकल जाती है।

बाशद रवा चू काफलाइ मौज पै ब पै
आबे बिनोश यक नफस अज जूइ बारि उमर।

प्रत्येक समय लहरों के काफिले की भांति उम्र की नदी बहती रहती है। यदि हो सके तो तुम इस उम्र की नदी में से पल भर के लिए पानी का घूँट पी लो।

सद कार करदाई कि नयाइद बकारि तू
गोया बिकुन कि बाज बिआइद बकारि उमर।

तुमने सैंकड़ों कार्य इस प्रकार के किए हैं जो कि तुम्हारे काम आने वाले नहीं हैं, इसलिए तुम ऐसे कार्य करो जो कि भविष्य में तुम्हारे काम आ सकें।

मा कि दीदेम सरि कूइ तू अै महिरमि राज
वज हमा रुइ फगंदेम सरि खुद निआज।

ऐ सर्वज्ञ! हम लोगों ने, जिन्होंने कि तुम्हारी गली के कोने-कोने को देखा है, सबकी तरफ से अपनी जरूरत का मुँह घुमा लिया है।

ता बगरदे सरि कूइ तू बगरदीद आम
रोजाइ खुलदी बरीं रा बिकुनम पा अंदाज।

हमारा, जब से तुम्हारी गली में घूमना आम हुआ है, हमने सबसे सुन्दर स्वर्ग के बाग को भी ठुकरा दिया है।

दिलि मन बे तू चूनाँसत चिह गोइदा गोया
हमचू आँ शमआ कि दाइम बवद-अज सोजो गुदाज।

मैं क्या बताऊँ कि तुम्हारे बिना मेरे दिल की क्या दशा है? यह उस दीपक की भांति है जिसे कि हमेशा जलना और पिघलना पड़ता है।

बे तू आलम जुमला हैरानसतो बस
सीना अज हिजरि तू बिरयाँनसतो बस।

परमात्मा की खोज करने वाला सदैव जिन्दा रहता है, उसकी जिह्वा पर बस हमेशा ही उस सर्वशक्तिमान का नाम रहता है।

जूद बिनुमा आँ रुखि चूं आफताब
ईं इलाजि चशमि गिरीआनसतो बस।

मुझे अपना सूर्य की भांति ओजस्वी मुख जल्दी दिखला दो क्योंकि मेरी रो रही आँखों को उस मुख के दर्शन करके ही प्रसन्नता मिल सकती है।

न गोइमत कि सूइ दैर या हरम मी रौ
बहर तरफ कि रवी जानबि खुदा मी बाश।

मैं तुम्हें यह नहीं कहता हूँ कि तुम मन्दिर की तरफ जाओ, या काबे की तरफ जाओ बल्कि मैं तो यह कहता हूँ कि तुम जिधर भी जाओ बस अपना मुख परमात्मा की तरफ ही रखो।

मुदाम शाकिरो शादाब चूं दिलि गोया
तमामि मुतलिबो फरिग जि मुदआ मी बाश।

सदैव गोया के दिल की भांति सन्तुष्ट व हरा-भरा रहा करो और तुम अपने निजी स्वार्थों से मुक्त हो जाओ, ऐसा करके तुम अपने वास्तविक मनोरथ को प्राप्त कर लोगे।

हर कस शनीदा असत जि तू गुफतगूइ खास
अज सद गमि शदीद जूद तर खलास।

जिस किसी ने भी तुम्हारी विशेष बात सुनी है, उसके सैंकड़े दुख तुरन्त ही समाप्त हो गए हैं।

आबि हयाति मा सखुनि पीरि कामिल असत
दिलहाइ मुरदा रा बिकुनद जिंदा ओ खलास।

पूरे तथा समर्थ सतगुरू जी का शबद हमारे लिए अमृत है क्योंकि यह मृत हृदयों को भी जीवित तथा मुक्त कर देता है।

'चलता'

गुरु नानक आगमन

(श्री गुरु नानक चमत्कार)

पद्म भूषण डा. भाई वीर सिंह जी

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक मई, पृष्ठ - 52)

26. मालदा

श्री गुरू जी कई जगहों पर थोड़ा-थोड़ा ठहरते हुए लोगों को जीवनदान देते हुए उत्तर दिशा की ओर चल पड़े तथा मुंघेर पहुँच गए, जहाँ पर कि अब तक एक गुरुद्वारा बना हुआ है। इसके बाद आप भागलपुर चले गए और इसके आगे कई नगरों का उद्धार करते हुए आप राजमहल आ गए। यहाँ से उत्तर-पूरब की तरफ होकर आप 'मालदा' पहुँचे। प्रत्येक जगह पर आपके निशान प्राप्त होते हैं। मालदा की बस्ती महानंद नदी के तट पर है। उसका नाम था - रामदेव बाबू। यह सज्जन सांसारिक ऐश्वर्य वाला था लेकिन बहुत ही भला पुरुष था। इसका एक बाग था जिसके अन्दर श्री गुरू जी ने जाकर डेरा लगा दिया। यह बाग 'मालदा' नाम के आमों वाला था और अच्छी आमदन देने वाला था, लेकिन रामदेव बाबू ने इसमें सन्तजनों के ठहरने के लिए एक कुटिया भी बनाई हुई थी। जब कभी कोई अच्छा साधू आ जाता तो उसे यहाँ ठहरने की इस प्रकार से आजादी थी, जैसे कि यह कुटिया किसी वन के अन्दर स्थित हो। एक दिन मरदाना रवाब बजा रहा था, मीठी-मीठी फुहार पड़ रही थी कि रामदेव बाबू आ गया। उस समय श्री गुरू जी गुरवाणी के एक शबद को गउड़ी राग की मधुर धुन में इस प्रकार से गा रहे थे -

चोआ चंदनु अंकि चड़ावउ ॥ पाट पटंबर पहिरि हढावउ ॥ बिनु हरि नाम कहा सुखु पावउ ॥ 1 ॥ किआ पहिरउ किआ ओढि दिखावउ ॥ बिनु जगदीस कहा सुखु पावउ ॥ 1 ॥ रहाउ ॥ कानी कुंडल गलि मोतीअन की माला ॥ लाल निहाली फूल गुलाला ॥ बिनु जगदीस कहा सुखु भाला ॥ 2 ॥ नैन सलोनी सुंदर नारी ॥ खोड़ सीगार करै अति पिआरी ॥ बिनु जगदीस भजे नित खुआरी ॥ 3 ॥ दर घर महला सेज सुखाली ॥ अहिनिसि फूल बिछावै माली ॥ बिनु हरि नाम सु देह दुखाली ॥ 4 ॥ हैवर गैवर नेजे वाजे ॥ लसकर नेब खवासी पाजे ॥ बिनु जगदीस झूठे दिवाजे ॥ 5 ॥ सिधु कहावउ रिधि सिधि बुलावउ ॥ ताज कुलह सिरि छत्रु बनावउ ॥ बिनु जगदीस कहा सचु पावउ ॥ 6 ॥ खानु मलूकु कहावउ राजा ॥ अबे तबे कूड़े है पाजा ॥ बिनु गुर सबद न सवरसि काजा ॥ 7 ॥ हउमै ममता गुर सबदि विसारी ॥ गुरमति जानिआ रिदै मुरारी ॥ प्रणवति नानक सरणि तुमारी ॥ 8 ॥ 10 ॥

अंग - 225

इस शबद का ऐसा प्रभाव पड़ा कि रामदेव के मन पर सांसारिक सुखों की अपेक्षा नाम सुख के शाश्वत होने का प्रभाव पड़ गया। अब वह नित्य प्रतिदिन दोनों समय कीर्तन सुनने लग पड़ा तथा श्री गुरू जी को वहाँ से प्रस्थान करने से रोकने लगा। इतना गहरा प्रेम इस सज्जन ने गुरू जी को किया कि श्री गुरू जी शेष बचे चौमासे के लिए वहीं पर टिक गए। मरदाना भी कई दिनों से एक जगह टिकने के लिए ही सोच रहा था, इसलिए उसका मनोरथ भी पूरा हो गया। यहाँ पर सत्संग का अच्छा रंग बना रहा। रामदेव का सारा ही परिवार सिक्ख बन गया, आस-पास के गाँवों में भी सिक्खी फैली तथा जन साधारण का कल्याण हुआ।

इसके बाद आप यहाँ से भी चले गए।

27. धंन है पाउ/ठग निस्तारा

जगत तारनहार श्री गुरू नानक देव जी तथा साथ में मरदाना जी चले जा रहे हैं कि रास्ते में उन्हें एक व्यापारी मिल पड़ा। उस व्यापारी के पास एक गाँठ थी, हाथ में तराजू था और कुछ तौलने वाले बाँट भी थे। दूर से ही सतगुरू जी ने उसका मस्तिष्क देखा तो खुश होकर उसे देखते ही रहे। जब वह पास में आ गया तो गुरू जी बोले, भद्रपुरुष! तुम्हारे पास क्या है? उसने कहा, जनाब! मेरे पास सूत है, जिसे मैं बेचने के लिए घूम रहा हूँ, हाथ में तराजू है और सामान तौलने के लिए प्रयोग में लाए जाने वाले कुछ बाँट हैं।

सतगुरू जी मुस्कुराए और बोले, ऐ भद्रपुरुष! तुम हमें अपना माल तथा तराजू व बाँट तो दिखा दो।

उस व्यापारी ने खुश होकर सारा कुछ खोल कर आगे रख दिया। सतगुरू जी ने पहले उस सूत को देखा फिर तराजू देखा और बाद में उन बाँटों को हाथों में उठा-उठा कर देखा और कहा अच्छा इनका वजन तो बतलाओ? उस व्यापारी ने सारे बाँटों के तौल बतला दिए। जब एक बाँट का नाम उसने 'पाव' बताया तो श्री गुरू जी बोले, 'धंन है पाउ' 'धंन है पाउ'।

वह व्यापारी इन वचनों को सुनकर आश्चर्यचकित हो गया और श्री गुरू जी की तरफ देखने लग पड़ा। वह क्या देखता है कि आपके नेत्र अर्शों की तरफ लग गए हैं, आँख की काली धार ऊपर की तरफ को चढ़ती जा रही है और चेहरा किसी दिव्य नूर की आभा से भरता जा रहा है तथा आपके मुखारविन्द से 'धंन पाउ' की मधुर धुन का उच्चारण होता जा रहा है। पास में खड़ा मरदाना भी विसमाद रंग में होकर देख रहा है और वह भी आश्चर्यचकित हो रहा है। अब उस व्यापारी के कानों पर भी 'धंन पाउ' की मधुर धुन अलौकिक प्रभाव को छोड़ रही है। उसके ऊपर भी ऐसा प्रभाव पड़ता जा रहा है कि उसके नेत्र भी जुड़ते जा रहे हैं और दिल भी इकट्ठा सा होता जा रहा है। जिस प्रकार से किसी मीठे राग की धुन प्रभाव छोड़ती है, उसी प्रकार से उसके ऊपर असर पड़ता जा रहा है। शनैः शनैः उस व्यापारी का मन, जो कि सामान्य परिस्थितियों में किसी राग आदि के प्रभाव में कम ही आया करता है, बे-वश होता-होता श्री गुरू जी के चरणों पर ही ढह पड़ा और वही मधुर धुन जो कि दिव्य गले में से, अर्शों में गड़े हुए नेत्रों वाले गले में से जरा लम्बी सी तथा रसभरी होकर आ रही थी -

पाओ! पाओ!

वही धुन उस व्यापारी के गले में से भी आरम्भ हो गई।

पाओ! पाओ!

यह 'पाओ' वाली धुन व्यापारी के गले में से बहुत विनम्र स्वर में निकल रही है। उसका सिर गुरू जी के चरणों में पड़ा हुआ है तथा उसका निजत्व बिना जाने चरणों पर बिछ रहा है।

काफी समय बाद गुरू जी ने नीचे की तरफ देखा, व्यापारी की मधुर धुन 'पाओ, पाओ' की सुनी। उसके काँपते हुए लेकिन चरणों पर टिके हुए उसके माथे के अन्दर अपने प्यार की झरनाहट को महसूस किया तथा उसकी हृदयवेधक विनम्र विनती पाओ! पाओ!! को सुनकर आप इतने प्रसन्न हुए कि उसके सिर पर हाथ रखा और फिर अर्शों की तरफ देखकर बोले - पाओ, पाओ, कृपा, कृपा, कृपा की नजर।

हाँ गुरू जी की इस प्यार भरी पुकार का प्रभाव पड़ा।

अदभुत भइओ अवर ही ठाटा।
तिह छिन खुलगे बिकट कपाटा।
जगयो गिआन दुबिधा सभ खोई।
तीन लोक की सुध उर होई।

हाँ कुछ दिन पहले जो नमक मिर्च की समझ वाला था और जो तराजू और बाँट लेकर चार पैसों के पीछे दौड़ा जा रहा था, अब वह अपने घट में तौलने वाला बन गया है। वहाँ पर अब तौला जा रहा है 'आप' तथा निजत्व का स्वामी 'वाहिगुरू'। वहाँ पर अब तौला जा रहा है प्यार तथा प्यार की तरंगें। हाँ वहाँ पर अब प्यार का व्यापार हो रहा है, सत्य का व्यापार हो रहा है। उसकी जीभ पर अब नाम की झरनाहट है, कलेजे में प्यार की खींच है और सिर में रस रंग तथा निजत्व का प्रकाश पड़ रहा है, जिसकी बदौलत उसका निजत्व किसी दिव्यानन्द में मगन है।

'पाओ' की मधुर धुन, 'पाओ' की अर्शी अरदास, दैवी हृदय से निकली अरदास व्यापारी को एक विशेष प्रकार का दिव्य स्पर्श दे गई। उसकी अरदास 'पाओ' बहुत नजदीक वाले सुन्दर कानों ने सुनी और उसकी झोली में पड़ गया - आत्म दान। आत्म दान प्राप्त करके या आत्म दान वाली खैरात की झोलियां भर कर वह व्यापारी शरशार हो रहा है। कितनी अचरज लीला घटित हुई है, इस प्रकार की कृपा का हिसाब कौन कर सकता है? कवि सन्तोष सिंह जी लिखते हैं कि वहाँ पर एक प्रश्न उत्पन्न हुआ कि इस व्यापारी पर इतनी जल्दी कृपा क्यों हो गई? इसने कौन सा ऐसा अभ्यास किया था कि बिजली को स्पर्श करते ही ज्वाला धधकने लगी? श्री गुरू जी प्रश्नोत्तर के रूप में कथन करते हैं कि -

पूरब जनम पुंन इस केरे॥
मिलि सतिसंगति कीनि घनेरे॥ दोहरा ॥
दीपक बाती तेल युत पावक लावन देर॥
हुइ है रौशन तुरत जिम तिउं इसको तूं हेर॥

श्री गु: ना: प्र:

सत्संग के द्वारा मन की साधना की जाती है और उस में से मैल को दूर किया जाता है। फलस्वरूप उसमें नाम को ग्रहण करने की शक्ति आ जाती है। जैसे ही मन किसी कारण अभेद अरदास में जला जाता है, वह किसी रूहानी अरदास से छू जाता है, किसी अद्भुत लीला के कारण रगड़ खा गया,

तो उसी समय नाम उसके अन्दर धँस जाता है। नाम के अभ्यास के कारण मन आशा व शंकाओं तथा भय व भ्रम से बाहर निकलता है और सोच में टिक कर अपने निजत्व के रंग में आ जाता है। यहाँ पर तो उस व्यापारी को मिल गए अर्शों के दाता जी, जिनकी बिजली के स्पर्श ने उसका उद्धार कर दिया। अब कौन सा हिसाब और कौन सा लेखा? ऐसी रूहानी आग लग गई जिसने कि सारे कर्मों को भस्म कर डाला।

व्यापारी सतगुरू जी के उपदेश के माध्यम से गुरुमुख होकर अपने गाँव चला गया और नाम के व्यापार मे लग गया। अब वह स्वयं नाम का जप करने लगा तथा अन्य लोगों को जपाने लग पड़ा।

श्री गुरू जी अब वहाँ से प्रस्थान कर गए और आपके साथ भाई मरदाना भी चल पड़ा। आगे एक भारी उजाड़ सा क्षेत्र आ गया और जब काफी लम्बे समय तक उसके अन्दर से गुजरते रहे तो मरदाना जी ने कहा महाराज जी! यह कैसा भयानक उजाड़ इलाका आ गया है, जिसमें कि परमात्मा का बन्दा कोई भी दिखाई नहीं पड़ता है?

मरदाना जी को सम्बोधित करके गुरू जी बोले -

सुनिकै बोले किपा निधाना -
इह नहि लखो उजार महाना।
बडो नगर वसदी अभिरामू।
सिमरन होइ जहाँ सतिनामू।
जहिं परमेसुर चि्त न आवै।
सो वसदी उदिआन लखावै।
हरख न होवे तहाँ कदाईं।
जहाँ न कबहुं प्रभू गुन गाईं।

मरदाना! वे उजाड़ जगहें तो बस्ती जैसी ही हैं, जहाँ पर कि परमात्मा का नाम चित्त में आता है और वह बस्तियाँ भी भयानक हैं, जहाँ के लोगों को परमात्मा भूला हुआ है और चहुँओर पापों का ही साम्राज्य चल रहा है। परमात्मा के प्रेम में जीवन गुजारने वालों ने ही उजाड़ों को बस्तियाँ बनाया है। जहाँ पर भाग्यशाली लोग या परमात्मा के शौक वाले लोग जाकर बैठ गए और जहाँ पर किसी ने बैठ कर साईं का सिमरन किया वह जगहें भी सौभाग्यशाली हो गईं।

यह कहते आपके नेत्र प्रेम रंग में जल भरकर ले आए और मीठे साईं के कीर्तन के करने वाले सुरीले गले में से इलाही नाद हुआ जो कि आसा राग की मधुर सुर में था -

देवतिआ दरसन कै ताई दूख भूख तीरथ कीए ॥ जोगी जती जुगति महि रहते करि करि भगवे भेख भए ॥ 1 ॥ तउ कारणि साहिबा रंगि रते ॥ तेरे नाम अनेका रुप अनंता कहणु न जाही तेरे गुण केते ॥ 1 ॥ रहाउ ॥ दर घर महला हसती घोड़े छोडि विलाईत देस गए ॥ पीर पेकाँबर सालिक सादिक छोडी दुनीआ थाइ पए ॥ 2 ॥ साद सहज सुख रस कस तजीअले कापड़ छोडे चमड़ लीओ ॥ दुखीए दरदवंद दरि तेरै नामि रते दरवेस भए ॥ 3 ॥ खलड़ी खपरी लकड़ी चमड़ी सिखा सूतु धोती कीनी ॥ तूं साहिबु हउ साँगी तेरा प्रणवै नानकु जाति कैसी ॥ 4 ॥ 1 ॥33॥ अंग - 358

यह शबद इस प्रकार के वैराग्य का नक्शा बाँध देने वाली सुर में गाया गया कि मरदाने के नेत्रों के आगे वाहिगुरू जी के शौक का नक्शा घूम गया और उसे यूँ महसूस होने लग पड़ा कि मानो घास-फूस व वनस्पति सभी साईं के मिलाप के लिए लालायित हो रहे हों। वन, मानो साईं के जिज्ञासुओं और खोजियों के पत्नों से भरपूर हैं तथा रंग-रंग के प्यार भ्रमर मानो येन-केन-प्रकारेण यत्नशील हो रहे हैं। जब तक आप गाते रहे, मरदाना इस स्वाद में मगन बैठा रहा। जब शबद समाप्त हुआ तो उसके कितनी ही देर बाद उसके नेत्र खुले। एक लम्बा सा श्वास भरते हुए मरदाना जी ने अपने चारों तरफ देखा और अपने दाता जी के चरणों की तरफ देखकर कहा -

बलिहार तेरे शौक को! बलिहार तेरे रंग को!

कुछ समय बाद आप आगे की तरफ चल पड़े। उजाड़ समाप्त हो गया, प्रकृति की कुंवारी सुन्दरता समाप्त हो गई। अब आगे हरी-हरी जूहें आ रही थीं लेकिन वे विरली-विरली आ रही थीं। कुछ समय बाद एक छोटी सी बस्ती भी आ गई। वास्तव में यह गाँव ठगों व बदमाशों का था। यहाँ के लगभग सभी निवासियों के मुख्य कार्य थे - लोगों को ठगना, लूटना और उसके बाद उन्हें मार डालना तथा पता भी न लगने देना, यह सब उनके मुख्य कार्य थे।

बस्ती देख कर सतगुरू जी ने वचन किया कि लो भाई! उजाड़ समाप्त हो गया है और अब देखो एक बस्ती आ गई है। रात्रि में यहाँ पर विश्राम करते हैं। मरदाने ने कहा, सत्य वचन, महाराज जी! श्री गुरू जी बोले, चल मरदाना। देखो उस करतार (परमात्मा) के रंग और बस्ती तथा उजाड़ का विश्लेषण।

'चलता'

श्री गुरू नानक देव जी के 2019 में 550 वर्षीय मनाए जा रहे प्रकाश पर्व को समर्पित गुरू नानक वाणी पर आधारित श्रृंखलाबद्ध लेख
श्री गुरू नानक देव जी की प्रमुख रचना 'आसा दी वार' में 'मानव संकट की चेतना'

डा. जगजीत सिंह

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक मई, पृष्ठ - 55)

3) आसा दी वार के कला पक्ष की विशेषता

आसा दी वार जहाँ पर एक तरफ अपने महान विषय के तौर पर रूहानियत की शिखरों को छूने के कारण तथा समकालीन सामाजिक जीवन की पूरी तस्वीर को प्रस्तुत करने के कारण महान है, वहीं पर दूसरी तरफ कलात्मक विशेषताओं के तौर पर भी किसी दृष्टि से न्यून नहीं है। बोली, शैली, बिम्ब, अलंकार, राग, रस आदि अनेकानेक साहित्यिक गुणों वाली यह एक अद्वितीय रचना मानी जाती है।

क) भाषा - श्री गुरू नानक देव जी से पहले पंजाबी में एकमात्र रचना 'बाबा फरीद के श्लोक' ही उपलब्ध हैं। ये आकार में थोड़े ही हैं और इनका विषय भी दैनिक गुणों तक ही सीमित है। श्री गुरू नानक देव जी पहले महान लोक कवि हुए हैं जिन्होंने पंजाबी मातृ भाषा को गहरे अध्यात्मिक, दर्शानिक तथा धार्मिक विचारों का माध्यम चुना तथा उसे सफलता सहित निभाया। श्री गुरू नानक देव जी ने केन्द्रीय पंजाबी को मान्यता प्रदान की तथा बड़े ही सुन्दर ढंग से इसके माध्यम से अपने महान विचारों को प्रस्तुत किया। देश-देशान्तरों का भ्रमण करने के कारण तथा पृथक-पृथक प्रान्तों व धर्मों के अनुयाइयों के साथ संवाद करते रहने के कारण उनकी बोली में अनेकों भाषाओं के शब्दों का प्रयोग होना स्वभाविक ही था। इस कारण से पंजाबी भाषा में विशालता तथा अमीरी आई है। आसा दी वार का शरीर तो पंजाबी भाषा का है लेकिन इसमें पंजाबी भाषा की उपभाषाएँ, खड़ी बोली, बृज भाषा, संस्कृत, अरबी तथा फारसी की शब्दावली ज्यादातर तद्भव रूप में प्रयुक्त हुई है। इसकी शब्दावली समयानुसार, विषयानुसार तथा स्थिति अनुसार है। उपयुक्त शब्दावली के कारण भाषा में कमाल की स्पष्टता है। शब्दों को नवीन अर्थ भी प्रदान किए गए हैं तथा शब्दों के प्रयोग के माध्यम से कोई विशेष परम्परा महान अथवा गौण हो गई है जैसे कि 'जनेऊ' को गौण अर्थ देने के लिए उसे 'धागा' कह दिया गया है। 'आसा दी वार' की भाषा में शक्ति है, मधुरता है तथा यह रंग-बिरंगी व लययुक्त है। गुरू जी शब्दों के भी पातशाह थे। अनेकों भाषाओं के असीम खजानों में से आपने प्रसंगानुसार शब्दावली का प्रयोग कर लिया है जिनका संक्षिप्त ब्यौरा इस प्रकार से है -

निरोल पंजाबी शब्दावली

आपणे

दिउहाड़ी (सद वार) सुन्ने, सुआह, जिन्द, परगास, बहालिआ, पाणी, भुख, गलई मधाणीआं, पंखी, नचण, कुदण, जरवाणा, ईंटे, सरीर, बिरखां, टिक्का, सास, कड़िआ, मड़ी-मसाणी, ढाडी, दारू, घर बार, गंढी, दाड़ी, कुठा, इआणे, झाटा इत्यादि।

खड़ी बोली के संबन्धक - का, की, के, कीए का प्रयोग है तथा शुद्ध पंजाबी भी जैसे 'आसा दी वार'

बृजभाषा के शब्द - कउ, भइआ, उपजै, उतरै, रिदै, वे, हो, कमाइअै आदि।

संस्कृत के शब्द - नाद, मन, माया, मिथ्या आदि।

पश्चिमी पंजाबी - महिंडा

अरबी तथा फारसी के शब्द - कुदरति, अमर, दीबाण, हुक्म, फुरमाण, करमु, नीसाणु, सिफति, सालाह, पातिशाह, रजाइ, दोजकि, रंग, राह, हाजरा, हुजूरि, कतेबां, बदीआ, खाके, कादर, पाकु, ताकु, दुनीदार, बाजार,

हिकमति, खुआरु, नदिर, मुसलमाना, शरीअति, बंदे, बंदी, दीदारु, खराबां, दारू, बखसीसी, दुनीआ, अंदेसे, मीआं बीबी, दोस्ती, मिकदार, खसम, गुनहगारु, अलहु, सुलतान, हरम, फुरमाइसि, रिजक, खरचु, कलम साहिबु, आसकी, करामाति, करीमु इत्यादि।

सम्पूर्ण तौर पर यह कहा जा सकता है कि गुरू जी ने भावों के उपयुक्त प्रकटीकरण को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक भाषा के शब्दों का प्रयोग नि:संकोच किया है।

अलंकार - अलंकार थोड़े हों लेकिन उपयुक्त व यथास्थान हो तो कविता को आभूषणों की भांति अलंकृत कर देते हैं लेकिन इनका आवश्यकता से अधिक प्रयोग, दुल्हन के स्वाभाविक सौन्दर्य को छिपाने का विपरीत प्रभाव भी डालने का कार्य करता है अर्थात अलंकारों का अधिक प्रयोग कविता को सजाने के स्थान पर उसे कुरूप करने का कार्य कर देता है। श्री गुरू नानक जी ने इस चीज से बचने का सफल प्रयास किया है। आप एक महान व चेतन कवि थे, इसलिए आपने आसा दी वार में सहज अलंकारों का उपयुक्त प्रयोग किया है ताकि कविता का भाव सहज रूप में ही स्पष्ट हो जाए। महान कलाकार लोक भावों तथा लोक सूझबूझ को ध्यान में रखकर ही अलंकारों का प्रयोग करता है। गुरू जी ने इसी कारण से उपमाओं, दृष्टान्तों तथा लोक बिम्बों का अत्यन्त सुन्दर प्रयोग किया है।

उपमा अलंकार - गुरू से बेमुख तथा अपनी हउमै के अधीन अन्धा व्यक्ति फल विहीन तिल के पौधे की भांति है जिसे कि किसान निरर्थक समझ कर खेत में ही वर्षा, आँधियों के बीच पशुओं को खाने के लिए छोड़ देता है -

नानक गुरु न चेतनी मनि आपणै सुचेत ॥
छुटे तिल बूआड़ जिउ सुंञे अंदरि खेत ॥ अंग - 463

मुर्दे को जलाना इस्लामी शरह के अनुसार घोर पाप है क्योंकि कयामत वाले दिन सारे मुर्दे कब्रों में से उठ जाने हैं और खुदा इनके अन्दर नई रूह को डाल देगा। गुरू जी एक उदाहरण के माध्यम से हिन्दुओं व मुसलमानों के इस झगड़े का बड़ा ही सुन्दर निपटारा करते हैं कि यदि मुसलमान मुर्दे की मिट्टी कुम्हार के हाथ में गई तो क्या होगा? मुर्दे को चाहे दबाया जाए या जलाया जाए इससे कुछ भी फर्क नहीं पड़ता है -

मिटी मुसलमान की पेड़ै पई कुमि्आर ॥
घड़ि भाँडे इटा कीआ जलदी करे पुकार ॥
जलि जलि रोवै बपुड़ी झड़ि झड़ि पवहि अंगिआर ॥
अंग - 466

यदि चोरी करके कमाए गए धन के द्वारा पुण्य किया जाए या श्राद्ध किए जाएँ तो इससे क्या होगा?

जे मोहाका घरु मुहै घरु मुहि पितरी देइ ॥
अगै वसतु सिञाणीऐ पितरी चोर करेइ ॥
वढीअहि हथ दलाल के मुसफी एह करेइ ॥
अंग - 472

अर्थात यदि बेगाना धन लूटकर पितरों के नमित्त श्राद्ध किए जाएं, पुण्य-दान किए जाएँ तो परमात्मा की दरगाह में जाकर तो वह चोरी का माल पहचान लिया जाएगा। फलस्वरूप पितरों को तो उल्टा चोरी के माल के कारण सजा भुगतनी पड़ेगी और साथ ही पण्डितों को चोरी की दलाली करने के कारण सजा मिलेगी -

रूपक अलंकार - कविता में संयम लाने के लिए कवि लोग उपमा देने के स्थान पर, वस्तु को उपमा देने वाली चीज ही मान लेता है। गुरू जी ने आसा दी वार में रूपक अलंकारों का बड़े ही अनोखे व कलात्मक ढंग से प्रयोग किया है।

इहु जगु सचै की है कोठड़ी सचे का विचि वासु ॥
अंग - 463

परमात्मा का विराट रूप दर्शाने के लिए समय की इकाई घड़ियां को गोपियों, पहर को श्री कृष्ण, पवन, पानी व अग्नि को गहनों तथा चाँद व सूर्य को अवतार दर्शाया है-

घड़ीआ सभे गोपीआ पहर कंन् गोपाल ॥
गहणे पउणु पाणी बैसंतरु चंदु सूरजु अवतार ॥
अंग - 465

अध्यात्मिक जनेऊ कैसा होता है -

दइआ कपाह संतोखु सूतु जतु गंढी सतु वटु ॥
एहु जनेउ जीअ का हई त पाडे घतु ॥ अंग - 471

दृष्टान्त अलंकार - दृष्टान्त अलंकार में उदाहरण देकर भावों को स्पष्ट किया जाता है जैसे कि घड़े के बिना पानी नहीं टिक सकता है न ही पानी बिना घड़ा बन सकता है। इसी प्रकार से ज्ञान के बिना मन नहीं टिक सकता है और गुरू के बिना ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो सकती है -

कुंभे बधा जलु रहै जल बिनु कुंभु न होइ ॥

गिआन का बधा मनु रहै गुर बिनु गिआनु न होइ॥

अंग - 469

अनुप्रास अलंकार - अनुप्रास अलंकार के प्रयोग के द्वारा संगीत रस को उत्पन्न किया गया है -

1. सचि कालु कूडु वरतिआ कलि कालख बेताल॥

2. कीता आपो आपणा आपे ही लेखा संढीऐ ॥

3. फिको फिका सदीऐ फिके फिकी सोइ ॥

अतिश्योक्ति अलंकार

पड़ि पड़ि गडी लदीअहि पड़ि पड़ि भरीअहि साथ॥
पड़ि पड़ि बेड़ी पाईऐ पड़ि पड़ि गडीअहि खात॥

अंग - 467

बिम्ब योजना - गुरू जी ने जिन बिम्बों का प्रयोग किया है, वे सब लोक जीवन में से ही लिए गए हैं। गुणहीन हउमै तथा अहंकार के द्वारा मदमस्त हुआ मनुष्य, सेमर के वृक्ष की भांति है जिससे कि फल, फूल, पत्ते आदि कुछ भी प्राप्त नहीं हो पाता है -

सिंमल रुखु सराइरा अति दीरघ अति मुचु ॥
ओइ जि आवहि आस करि जाहि निरासे कितु ॥

अंग - 470

शब्द चित्रण - चित्रकार तो रंगों और ब्रुशों के द्वारा चित्र बनाता है जबकि कवि शब्दों के माध्यम से आँखों के आगे तस्वीर को लटका देता है। माया से ग्रसित मनुष्य परलोक में कैसे जाता है, एक चित्रण प्रस्तुत है -

वडा होआ दुनीदारु गलि संगलु घति चलाइआ ॥

अंग - 464

माया एकत्र करने के लिए रासधारिए बाजारों मे कैसे नाचते, कूदते व रासें डालते हैं, इसका एक बहुत ही सुन्दर चित्र निम्नलिखित शबद के द्वारा साकार हो रहा है -

वाईन चेले नचनि गुर ॥
पैर हलाईन फेरनि् सिर ॥
उडि उडि रावा झाटै पाइ ॥
वेखै लोकु हसै घरि जाइ ॥
रोटीआ कारणि पूरहि ताल ॥
आपु पछाड़हि धरती नालि ॥
गावनि गोपीआ गावनि कान् ॥
गावनि सीता राजे राम ॥
.....
कोलू चरखा चकी चकु ॥
थल वारोले बहुतु अनम्तु ॥
लाटू माधाणीआ अनगाह ॥
पंखी भउदीआ लैनि न साह ॥
.....

अंग - 465

शैली - श्री गुरू नानक देव जी एक महान शैलीकार थे। उनके कहने के ढंग में शक्ति है, रवानगी है, संयम है तथा कला का चमत्कार है। आसा दी वार की बोली, कहने का ढंग, विषय का प्रकटीकरण, शव्द-चित्र, अलंकारों का उपयुक्त प्रयोग, श्री गुरू नानक देव जी के एक महान शैलीकार होने की गवाही भरते हैं। गुरू जी ने यथार्थ तथा सत्य को दलेरीपूर्वक प्रकट किया है। समाज की हाकिम श्रेणी, धर्म के ठेकेदारों यानि कि काजी, मुल्ला, पण्डित, योगी तथा धनवान श्रेणी को करारे हाथों लिया है। भेषधारियों के पाखण्ड को प्रकट करने के समय आपने कड़ी से कड़ी शब्दावली का प्रयोग किया है। संयम इतना है कि कई बार तो केवल एक-एक शब्द के प्रयोग के द्वारा भावों की तरफ इशारा किया है। दरअस्ल गुरू जी का ज्ञान इतना विशाल है कि जब किसी भी पक्ष पर आप लिखने लगते हैं तो मानो ज्ञान के अम्बार सामने लग जाते हो और शब्दों के असीम भण्डार में से आवश्यक शब्द जड़ते जाते हैं और महान रचना का निर्माण होता जाता है। निम्नलिखित शबद प्रस्तुत है -

पुरखाँ बिरखाँ तीरथाँ तटाँ मेघाँ खेताँह ॥
दीपाँ लोआँ मंडलाँ खंडाँ वरभंडाँह ॥
अंडज जेरज उतभुजाँ खाणी सेतजाँह ॥
सो मिति जाणै नानका सराँ मेराँ जंताह ॥

अंग - 467

आपकी शैली में हास्य-रस, नाटकीय ढंग तथा व्यंग्यत्मकता कूट-कूट कर भरी है। आपने कटाक्ष का बहुत प्रयोग किया है, विशेष रूप से फोकट कर्मकाण्डों की आलोचना के समय। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं -

लिखि लिखि पड़िआ॥ तेता कड़िआ॥
बहु तीरथ भविआ तेतो लविआ ॥
बहु भेख कीआ देही दुखु दीआ ॥
सहु वे जीआ अपणा कीआ ॥
अंनु न खाइआ सादु गवाइआ ॥
बहु दुखु पाइआ दूजा भाइआ ॥
बसत्र न पहिरै अहिनिसि कहरै ॥
मोनि विगूता किउ जागै गुर बिनु सूता ॥

पग उपेताणा ॥ अपणा कीआ कमाणा ॥
अलु मलु खाई सिरि छाई पाई ॥
मूरखि अंधै पति गवाई ॥
विणु नावै किछु थाइ न पाई ॥
रहै बेबाणी मड़ी मसाणी ॥
अंधु न जाणै फिरि पछुताणी ॥ *अंग - 468*

व्यंग्य तथा कटाक्ष का उदाहरण निम्नलिखित शब्द के माध्यम से भी बहुत कमाल का परिलक्षित होता है। एक तरफ तो ब्राह्मण के बहिर्मुखी आडम्बर, उसकी वेष-भूषा, धोती, टीका, जपमाली, पूजा, संध्या आदि का जिक्र है और दूसरी तरफ उसके अन्तर्मुखी कार्य कलापों का ब्यान है। इस विधि से पाखण्ड टुकड़े-टुकड़े होता प्रतीत होता है -

पड़ि पुसतक संधिआ बादं ॥
सिल पूजसि बगुल समाधं ॥
मुखि झूठ बिभूखण सारं ॥
त्रैपाल तिहाल बिचारं ॥
गलि माला तिलकु लिलाटं ॥
दुइ धोती बसत्र कपाटं ॥ *अंग - 470*

काव्य रूप - आसा दी वार के पहले स्वरूप में केवल 24 पउड़ियाँ ही थीं लेकिन श्री गुरू अरजन देव जी ने श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की सम्पादना के समय इन 24 पउड़ियों के साथ 59 श्लोक भी जोड़ दिए। इन श्लोकों में से 15 श्लोक तो श्री गुरू अंगद देव जी के हैं और शेष 44 श्लोक श्री गुरू नानक देव जी के हैं। यह 'वार' पंजाबियों का लोकप्रिय काव्य रूप है, यही कारण है कि लोक-कवि श्री गुरू नानक देव जी ने अपने अध्यात्मिक तथा रहस्यवादी विचारों के प्रकटीकरण के लिए इस काव्य रूप का चुनाव किया। आपने 12 वारों की इसी काव्य रूप में रचना की तथा पंजाबी साहित्य को अध्यात्मिक वारों की एक अमीर परम्परा प्रदान की। इसके उपरान्त दूसरे, तीसरे, चौथे तथा पाँचवें गुरू साहिबान ने भी इस काव्य रूप की रचना की तथा भाई गुरदास जी ने 39 वारें लिखीं। इस प्रकार से 'आसा दी वार' पंजाबी की पहली अध्यात्मिक वार है। इससे पहले लिखी गई वारों का विषय युद्ध, बहादुरी, किसी नायक की खुद्दारी तथा शुभ गुणों का वर्णन होता था। देशवासियों के सोए हुए स्वाभिमान को जगाना, देश-कौम व धर्म के लिए उन्हें तैयार करना तथा उनके अन्दर वीर-रस को उभारना इन वारों का उद्देश्य हुआ करता है। इसका प्रचलित रूप पुड़ी है जिसे गाने से जोश भरपूर आवाज उत्पन्न होती है तथा मन में घबराहट उत्पन्न होती है एवं खून में उबाल उत्पन्न होता है। यह गुण अध्यात्मिक वारों में भी कायम रहता है। पउड़ी की बनावट ही ऐसी है कि पहली पूरी पंक्तियाँ विषय को शिखर तक ले जाती हैं और अन्तिम आधी पंक्ति, विषय की विशेषता को दोहराती है। 'आसा दी वार' की पउड़ियों की सारी संरचना ही ऐसी ही है। पहली चार पंक्तियाँ पूरी हैं और अन्तिम आधी पंक्ति है जिसमें कि विशेष विचार को दोबारा कहा गया है। जैसे कि -

आपीन्है आपु साजिओ आपीन्है रचिओ नाउ ॥
दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ ॥
दाता करता आपि तूं तुसि देवहि करहि पसाउ ॥
तूं जाणोई सभसै दे लैसहि जिंदु कवाउ ॥
करि आसणु डिठो चाउ ॥ *अंग - 463*

'करि आसणु डिठो चाउ' दूसरी पंक्ति का पिछला भाग है जो कि अन्तिम पांचवीं आधी पंक्ति बन गया है।

पउड़ी 2 - नानक जीअ उपाइ कै लिखि नावै धरमु बहालिआ ॥

सभी पउड़ियों में यही विधि चलती है तुकान्त दो-दो तुकों का या फिर चार या पाँच तुकों का भी मिलता है लेकिन रवानगी में कहीं भी कोई अन्तर नहीं पड़ा है।

पउड़ी 1. का तुकान्त है - नाउ, चाउ, पसाउ, कताउ, चाउ।

पउड़ी 2. बहालिआ, जजमालिआ, चालिआ, वालिआ।

पउड़ी 3. सिधइआ, चलाइआ, समझाइआ, गवाइआ इत्यादि।

इन सारी पउड़ियों का विषय एक ही है और वह है - अध्यात्मवाद। बीच-बीच में नगीनों की भांति जड़े हुए श्लोकों का विषय इससे पृथक सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक तथा राजनैतिक विचारधारा के साथ सम्बन्ध रखता है।

सम्पूर्ण तौर पर 'आसा दी वार' एक महान रचना है। इसमें सरलता व रवानी है, भाषा की विशालता है, शैली शक्तिशाली है, जिसमें कि संक्षेपता व संयम है। इसे रागों, रसों व अलंकारों के द्वारा सुसज्जित किया हुआ है तथा इसकी महान ऐतिहासिक महत्ता भी है। यह उस समय के समाज तथा संस्कृति का सही चित्रण भी प्रस्तुत करती है।

गुरवाणी अर्थ भण्डार

सन्त हरी सिंह जी 'रन्धावे वाले'

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जून, पृष्ठ - 54)

सिरीरागु महला 3
त्रै गुण माइआ मोहु है
गुरमुखि चउथा पदु पाइ॥

हे भाई! त्रैगुण = तीन गुण (रजो, तमो, सतो) वाली अवस्था में माया का मोह बना ही रहता है अथवा जो त्रिगुणी माया की उपासना है यह माया का मोह है, परन्तु गुरुमुखजन तीनों से अतीत होकर चतुर्थ पद भावार्थ तुरिया पद को पाई = प्राप्त कर लेते हैं।

करि किरपा मेलाइअनु
हरि नामु वसिआ मनि आइ॥

कृपा करके जिन्हें गुरुमुखों की संगत में प्रभु जी ने मेलाइअन = मिला लिया है उनके मनों में प्रभु जी का नाम बस गया है।

पोतै जिन कै पुंनु है
तिन सतसंगति मेलाइ॥1॥

जिन कै = जिनके हृदय रूपी पोतै = खजाने में पूर्वजन्मों के पुण्य कर्म पड़े हुए हैं, तिन = उन्हें गुरू जी अपनी सत्संगत में मेलाइ = मिला लेते हैं।

भाई रे गुरमति साचि रहाउ॥

हे बन्धु! गुरमति = गुरू की मति को धारण करके साचि = सत्य स्वरूप परमात्मा में ही मिले रहो।

जो सत्य नाम को ही श्रवण करते हैं, सत्य नाम का ही मनन करते हैं और सत्य नाम की ही कमाई करते हैं, उन्होंने साचै सबदि = सच्चे उपदेश के द्वारा परमात्मा के नाम की पहचान कर ली है, भावार्थ नाम की महिमा को जान लिया है कि नाम के बराबर कुछ भी नहीं है, हम तिन = उनके विॅहु = ऊपर से बलि जाउ = बलिहार जाते हैं।

आपु छोड चरणी लगा
चला तिन कै भाइ॥

अपने गुणों का अभिमान छोड़ कर उन गुरुमुखों की चरण-शरण में जाना चाहिए अथवा उन गुरुमुखों के अनुसार अपने जीवन को ढालना चाहिए -

लाहा हरि हरि नामु मिलै
सहजे नामि समाइ॥

क्योंकि गुरुमुखों की संगत में से हरि नामु = प्रभु जी के नाम का लाहा = लाभ मिलै = मिलता है तथा सहजे = स्वाभाविक ही वाहिगुरू जी के नाम में समाहि = समा जाया जाता है।

बिनु गुर महलु न पाईऐ
नामु न परापति होइ॥

हे भाई! बिनु गुर = गुरू जी के उपदेश के बिना अथवा गुरू जी की कृपा के बिना महलु = सत्य स्वरूप परमात्मा को नहीं पाईऐ = पाया जाता है और न ही नाम की प्राप्ति होई = होती है।

ऐसा सतगुरु लोड़ि लहु
जिदू पाईऐ सचु सोइ॥

हे भाई! ऐसा पूर्ण तथा अमृत नाम को प्रदान करने वाला सतगुरू लोड़ि = ढूंढ लो जिदू = जिस गुरू से सोइ = उस सच्चे परमात्मा की प्राप्ति हो जाए भावार्थ जीवन में पूरे सतगुरू की जरूरत है, जिनके द्वारा सच्चे परमात्मा की प्राप्ति हो सके। दम्भी, पाखण्डी व झूठे गुरू प्रभु जी के साथ हमारा मिलाप नहीं करवा सकते हैं।

असुर संघारै सुखि वसै जो तिसु भावै सु होइ॥

सतगुरू जी तो ऐसे हैं जो कि काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार रूपी असुर = दैत्यों को संहारै = मार डालते हैं तथा गुरुमुखों के हृदय में सुख स्वरूप परमात्मा आकर बस जाता

है।

जेहा सतिगुरु करि जाणिआ
तेहो जेहा सुखु होइ॥

जेहा = जिस प्रकार का किसी ने सतगुरू जी को जाना है भावार्थ जिस प्रकार की किसी ने सतगुरू जी पर अपनी भावना रखी है, उसे तेहो = उसी के अनुरूप सुख प्राप्त हो जाता है, भावार्थ अपनी भावना के अनुरूप ही सतगुरू जी के पास से फल की प्राप्ति की जा सकती है।

एहु सहसा मूले नाही
भाउ लाए जनु कोइ॥

इस उपर्युक्त सिद्धान्त पर तनिक सी भी सहसा = सन्देह की बात नहीं है, चाहे कोइ = कोई भी जनु = पुरुष सतगुरू जी में भाउ को लगा कर देख ले यानि कि यह बात निःसन्देह है कि सतगुरू जी के द्वारा अपनी भावनानुसार ही फल की प्राप्ति होती है -

नानक एक जोति दुइ मूरती
सबदि मिलावा होइ॥4॥11॥44॥

सतगुरू जी फुरमान करते हैं कि श्री गुरू नानक देव जी तथा प्रभु जी की एक ही ज्योति है, भले ही सतगुरू जी ही सगुण तथा निर्गुण दो स्वरूपों में हैं लेकिन वास्तव में वे एक ही ज्योति स्वरूप हैं। तात्पर्य यह है कि सतगुरू जी के अन्दर भी उसी अकालपुरुष की ज्योति जग रही है अथवा दुहि मूरती = जीव तथा ईश भेद ज्ञान के कारण भिन्न हैं। जीव अल्पज्ञ है जबकि ईश्वर सर्वज्ञ है लेकिन ज्योति दोनों के अन्दर एक ही है। गुरू जी के शब्द के द्वारा ही जीव तथा परमात्मा का मिलाप = मिलाप होता है, ठीक इसी प्रकार से प्रबुद्ध चेतन सिक्ख है। भले ही गुरू तथा सिक्ख भी दो मूर्तियाँ दिखाई पड़ती हैं। सतगुरू जी के सबदि = उपदेश के द्वारा ही जीव तथा परमात्मा, सिक्ख तथा गुरू, जिज्ञासु व परमात्मा का मिलावा = मिलाप होइ = होता है।

सिरीरागु महला 3
अंम्रितु छोडि बिखिआ लोभाणे
सेवा करहि विडाणी॥

हे बन्धु! जो मनमुख लोग प्रभु जी के नाम रूपी अमृत को छोडि = छोड़कर बिखिआ = माया अथवा कामादिक विखिआ = विषयों-विकारों में लोभाणे = लोभायमान हो रहे हैं तथा परमात्मा को भुलाकर विडाणी = बेगानी भावार्थ देवी-देवताओं की सेवा आदि करहि = करते हैं तथा -

आपणा धरमु गवावहि बूझहि नाही
अन दिनु दुखि विहाणी॥

जो परमात्मा को पहचानने रूपी धर्म था, मनमुख लोग उस धर्म को गवावहि = भूलते जा रहे हैं तथा अपने स्वरूप को जानते अथवा गुरू जी के द्वारा बूझहि = समझते नहीं हैं, जिस कारण से अनदिनु = नित्य प्रतिदिन अपनी आयु दुखों में विहाणी = व्यतीत कर रहे हैं।

मनमुख अंध न चेतही
डूबि मुए बिनु पाणी॥

इस प्रकार के मनमुख लोग मन व बुद्धि रूपी नेत्रों में दृष्टिहीनता के तौर पर यानि कि अज्ञानतावश अन्धे होकर परमात्मा को न चेतही = याद नहीं करते हैं तथा इस मिथ्या प्रपंच रूपी संसार में प्रत्यक्ष पानी के बिना पदार्थों रूपी पानी में डूब रहे हैं तथा परमात्मा की तरफ से मर रहे हैं।

मन रे सदा भजहु हरि सरणाई॥

हे मन! सदा = सदैव वाहिगुरू जी की शरण में रहकर उसका भजहु = भजन करो।

गुर का सबदु अंतरि वसै
ता हरि विसरि न जाई॥रहाउ॥

यदि सतगुरू जी का शब्द तुम्हारे हृदय के अन्दर बस जाए तो फिर तुम्हें हरि = प्रभु जी कभी भी विसरि = भूलेगा नहीं भावार्थ आठों पहर सिमरन का प्रवाह चलता रहेगा।

इहु सरीरु माइआ का पुतला
विचि हउमै दुसटी पाई॥

हे बन्धु! यह शरीर तो माया का पुतला है, भावार्थ माया का बना हुआ है, अथवा माया का (पुत+ला) लय हो जाने वाला पुत्र बना हुआ है, भावार्थ यह तो खर या कागज से बने हुए पुतले की भांति है जो कि झूठे अथवा केवल देखने मात्र के लिए ही होते हैं। इसके अन्दर जो हउमै = देह हंगता है, वह दुसटी = दुष्ट स्वभाव वाली माया ने डाल रखी है कि मैं शरीर हूँ, भावार्थ यह अपने शरीर को ही अपना निजत्व

समझ बैठा है।

आवणु जाणा जंमणु मरणा
मनमुखि पति गवाई॥

इस हउमै के कारण ही इस जीव का जीवन व मरण का चक्र यानि कि आवागमन का चक्र सदैव बना ही रहता है और इस प्रकार से मनमुख लोगों ने अपनी पति = इज्जत गवाई = गंवा ली है।

सतगुरु सेवि सदा सुखु पाइआ
जोती जोति मिलाई॥2॥

जिन गुरमुखों ने सतगुरू जी की सेवा करके शाश्वत आनन्द को प्राप्त कर लिया है उनकी प्रत्यक्ष ज्योति को सतगुरू जी ने ब्रह्म की ज्योति में मिलाई = मिला दिया है।

सतगुर की सेवा अति सुखाली
जो इछे सो फलु लाए॥

हे बन्धु! सतगुरू जी की सेवा, जो कि अति = अत्यन्त सुखाली = सुखदाई है अथवा सुखों का घर है जिसके द्वारा मन वांछित फल प्राप्त हो जाता है।

जतु सतु तपु पवितु सरीरा
हरि हरि मंनि वसाए॥

जो ब्रह्मचर्य धारण करके, सत्य परायण होकर व तप साधना करके शरीर को पवितु = पवित्र करना है, वह यही है कि प्रभु जी के नाम को अपने मन में बसा लेना है। भावार्थ परमात्मा के नाम को मन में बसाना ही वास्तविक जत, सत व तप आदि साधन हैं यानि कि सारे साधनों का फल, नाम द्वारा ही प्राप्त हो जाता है।

सदा अनंदि रहै दिनु राती
मिलि प्रीतम सुखु पाए॥3॥

वे गुरमुखजन सदैव यानि कि दिन-रात आनन्द में ही रहते हैं भावार्थ अविद्या रूपी रात को निकल कर ब्रह्मज्ञान रूपी सूर्योदय की आत्मिक आनन्दावस्था में रहते हैं तथा प्रीतम = प्यारे प्रभु जी के साथ मिलकर सुख पाए = प्राप्त करते हैं।

जो सतगुर की सरणागती
हउ तिन कै बलि जाउ॥

जो सतगुरू जी की शरण को प्रप्त करते हैं, हउ = मैं उनके ऊपर से बलि = बलिहार जाता हूँ।

दरि सचै सची वडिआई सहजे सचि समाउ॥

परमात्मा के सच्चे द्वार पर उन्हें सच्ची शोभा प्राप्त होती है अथवा सत्संगत रूपी सच्ची शोभा प्राप्त होती है अथवा ज्ञान रूपी सच्ची अवस्था में स्थित होने पर ब्रह्मज्ञानी को सच्ची शोभा प्राप्त होती है तथा सहजे = सहज स्वभाव ही सचि = सत्य स्वरूप में समाउ = समा जाने की आनन्दावस्था प्राप्त हो जाती है।

नानक नदरी पाईऐ
गुरमुखि मेलि मिलाउ॥

सतगुरू जी फुरमान करते हैं कि पूरे गुरू जी की नदरी = कृपा दृष्टि के द्वारा ही ब्रह्मज्ञान पाईऐ = प्राप्त किया जाता है। सतगुरू जी जिनको गुरुमुखों के साथ मिला दें उन्हें ही यह परम वस्तु प्राप्त हो पाती है।

'चलता'

आवश्यक निवेदन

रिन्युवल का चन्दा भेजने के लिए मेंबरशिप नम्बर (सदस्यता संख्या) तथा रिन्युवल तारीख (पुनर्नवीनीकरण तिथि) का व्यौरा अवश्य दिया जाए तथा यह भी बतलाया जाए कि चन्दा, रिन्युवल के लिए है अथवा नई मेंबरशिप प्राप्त करने के लिए प्रेषित किया गया है।

यदि किसी प्रेमी पुरुष ने आत्म मार्ग मैगजीन के लिए चन्दा जमा करवाया हो और उसे मैगजीन न पहुँच पा रहा हो, तो उसे जमा करवाई गई रकम का रसीद नम्बर आदि लिखकर आत्म मार्ग कार्यालय से सम्पर्क करना चाहिए।

'आत्म मार्ग' एक धार्मिक मैगजीन है, इसके अन्तर्गत श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की वाणी छपी हुई होती है, इसलिए समस्त पाठक बन्धुओं से अनुरोध है कि कृप्या इसका प्रयोग रद्दी पेपर की भांति न किया जाए। यदि आप पुराने मैगजीन को रखना नहीं चाहते हैं तो उन्हें हमारे किसी भी वितरण केन्द्र पर सहर्ष वापिस कर सकते हैं।

वारां भाई गुरदास
स्टीक

डा. भाई वीर सिंह जी

20. पउड़ी (मुसलमानी मत)

बहु वाटी जगि चलीआ तब ही भए मुहंमदि यारा।
कउमि बहतरि संगि करि बहु बिधि वैरु विरोध पसारा।
रोजे, ईद, निमाजि करि करमी बंदि कीआ संसारा।
पीर पैकंबर अउलीए गउस कुतब बहु भेख सवारा।
ठाकुर दुआरे ढाहिकै तिहि ठउड़ी मासीत उसारा।
मारनि गउ गरीब नो धरती उपरि पापु बिथारा।
काफर मुलहिद इरमनी रुमी जंगी दुसमणि दारा।
पापे दा वरतिआ वरतारा।

जब मोहम्मद तथा उसके चार यार (अबूबकर सदीक, उमर फारूक, उस्मान गनी, हजरत अली) हुए तब इनके महजब के तौर पर संसार के अन्दर कई मार्ग चले। इन्होंने बहत्तर प्रकार का विभाजन करके कौम के अन्दर कई प्रकार के वैर व विरोध में वृद्धि कर दी। तीस रोजे, दो ईदें तथा पाँच नमाजें बनाकर इन्होंने कर्मों की किलेबन्दी में सारे संसार को कैद कर डाला अर्थात अब प्रेम-भक्ति के स्थान पर केवल फोकट कर्मकाण्ड ही शेष रह गए थे। इन्होंने पीर, पैगम्बर, औलिए, गौस तथा कुतुब आदि बहुत सारे भेष बना दिए। यही नहीं बल्कि ये ठाकुरद्वारों को गिराकर उनकी जगह पर मस्जिदें बनाने लग पड़े। गाय तथा गरीब पर ये खूब जुल्म करने लगे, फलस्वरूप धरती पर खूब पाप फैल गया और लोग परोपकार को भूलकर गरीबों के घातक हो गए। काफिर तथा बेईमान के भेद आर्या आदि के देश-भेद बतला कर युद्ध करने लग पड़े तथा स्त्रियों पर अपना अधिकार स्थापित करने के लिए भी युद्ध करने लग पड़े। इस प्रकार के कुकर्मों व पापों का फैलाव चहुँओर बढ़ गया।

भावार्थ - यह गिरावट का नक्शा, जो कि मुसलमानों के अन्दर फैल चुका था, दिखला कर आप यह साबित कर रहे हैं कि इनके लिए भी संसार के अन्दर ग्लानि ही फैल गई। इसके आगे आप दोनों धर्मों का तुल्नात्मक मूल्यांकन कर रहे हैं।

21. पउड़ी (हिन्दू तथा मुसलमान का तुल्नात्मक व्यौरा)

चारि वरन चारि मजहबा जग विचि हिंदू मुलसमाणे।
खुदी बखीली तकबरी खिंचोताण करेनि धिङाणे।
गंग बनारसि हिंदूआँ मका काबा मुसलमाणे।
सुंनति मुसलमाण दी तिलक जंञू हिंदू लोभाणे।
राम रहीम कहाइदे इकु नामु दुइ राह भुलाणे।
बेद कतेब भुलाइकै मोहे लालच दुनी सैताणे।
सचु किनारे रहि गइआ खहि मरदे बाहमण मउलाणे।
सिरो न मिटे आवण जाणे॥

संसार के अन्दर हिन्दुओं के चार वर्ण तथा मुसलमानों के चार मजहब यानि कि ये सभी अहंकार, बखीली, स्वार्थ तथा अपनी तरफ को खींचा-खींची करते हुए दूसरों पर अत्याचार करने लग पड़े। हिन्दुओं ने गंगा व काशी को तथा

मुसलमानों ने मक्का और काबा को अपने पूजा स्थल मान लिया। मुसलमान लोग सुन्नत करने लग पड़े तथा हिन्दू लोग तिलक व जनेऊ पहनने लग पड़े। हिन्दू लोग अपने इष्ट को 'राम' तथा मुसलमान लोग अपने इष्ट को 'रहीम' के नाम से पुकारने लग पड़े तथा अज्ञानतावश दोनों ने अपने अलग-अलग मार्ग बना लिए। दोनों धर्म वाले अपनी धार्मिक पुस्तकों के उपदेशों को भूलकर लोभ-लालच में बुरी तरह से फँस गए। सत्य एक तरफ रह गया जबकि ब्राह्मण तथा काजी लोग आपस में ही झगड़े करने लग पड़े। इस प्रकार चौरासी लाख योनियों के चक्रव्यूह में से कोई भी बाहर नहीं निकल पाया।

भावार्थ - 'नानक लेखै इक गल होरु हउमै झखणा झाख।।' इसमें हिन्दुओं और मुसलमानों का व्यर्थ की बातों में फँसे रहना और सत्य से दूर हो जाना दर्शाया गया है तात्पर्य यह है कि प्रेम-भक्ति तो रही नहीं है और केवल पाखण्ड और दिखावा ही रह गया है। हिन्दुओं और मुसलमानों के व्यवहारिक पक्षों पर रौशनी डालते हुए संसार की ग्लानि को उजागर किया गया है कि किस प्रकार ये दोनों धर्मावलम्बी आडम्बरवाद और पाखण्डवाद के कार्यों में फँस कर रह गए हैं।

22. पउड़ी (वाहिगुरू जी का न्याय)

चारे जागे चहु जुगी पंचाइणु प्रभु आपे होआ।
आपे पटी कलमि आपि आपे लिखणिहारा होआ।
बाझु गुरु अंधेरु है खहि खहि मरदे बहु बिधि लोआ।
वरतिआ पापु जगत्र ते धउल उडीणा निसदिन रोआ।
बाझु दइआ बलहीण होइ निघर चले रसातलि टोआ।
खड़ा इकते पैर ते पाप संगि बहु भारा होआ।
थंमे कोइ न साधु बिनु साधु न दिसै जगि विचि कोआ।
धरम धउल पुकारे तलै खड़ोआ॥

चारों युगों में चारों युग प्रवर्तक हुए और इनमें परमात्मा स्वयं न्याय करने वाला हुआ। पटरी (स्लेट) कलम व लेखक भी वह स्वयं हुआ। क्योंकि गुरु के बिना घोर अन्धकार है तथा गुरू के ज्ञान के बिना लोग आपस में ही लड़कर मर जाते हैं। सारे संसार के अन्दर पाप का ही फैलाव है और धर्म रूपी बैल उदास होकर दिन-रात हाय-विलाप करता है। वह दया के बिना कमजोर होकर पाताल के गड्ढों में गिरने लग पड़ा है। धर्म रूपी बैल केवल एक पैर पर खड़ा रहने के कारण पापों के बोझ से भारी हो गया है। ऐसी स्थिति में केवल साधू ही एकमात्र ऐसी हस्ती था, जो कि संसार को सहारा दे सकता था लेकिन पूर्ण साधू भी संसार के अन्दर कोई दिखाई नहीं दे रहा है। यही कारण है कि धर्म रूपी बैल धरती के नीचे खड़ा होकर याचना कर रहा है।

भावार्थ - ग्लानि भाव से रोकने वाला धर्म है लेकिन धर्म की बुरी दशा को प्रकट करके आप कथन करते हैं कि इन झगड़ों व ईर्ष्याओं के माहौल में परमात्मा ने स्वयं मुखी के तौर पर न्यायकर्ता बनकर तथा स्वयं पट्टी, कलम व लेखक बनकर संसार की रक्षा की क्योंकि पाप प्रबल हो गया था और धर्म कमजोर हो चुका था तथा कहीं पर भी पाप को बलहीन तथा धर्म को शक्तिशाली करने वाला साधू कहीं पर भी दिखाई नहीं पड़ता था। साधू को पैदा करने के लिए गुरू की जरूरत थी जो कि अपना प्रकाश देकर साधू बनाए। इसीलिए अकालपुरुष ने स्वयं न्याय किया। वह न्याय यह था कि उसने संसार के अन्दर गुरू-अवतारों को भेजा। अगली पउड़ी में आप उस गुरू अवतार के प्रकट होने का वर्णन करते हैं-

23. पउड़ी (गुरु-अवतार)

सुणी पुकारि दातार प्रभु गुरु नानक जग माहि पठाइआ।
चरन धोइ रहरासि करि चरणाम्रितु सिखा पीलाइआ।
पारब्रहम पूरन ब्रहम कलिजुग अंदरि इक दिखाइआ।
चारे पैर धरम दे चारि वरन इक वरनु कराइआ।
राणा रंक बराबरी पैरी पवणा जगि वरताइआ।
उलटा खेलु पिरंम दा पैराँ उपरि सीसु निवाइआ।
कलिजुगु बाबे तारिआ सतिनामु पड़ि मंत्र सुणाइआ।
कलि तारणि गुरु नानक आइआ॥

(शेष पृष्ठ 55 पर)

स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार
(Inspired Thoughts of Swami Ram)

डा. स्वामी राम जी

अनुवादक - शमशेर सिंह 'कोमल', एम. ए., एम. फिल.

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जून, पृष्ठ - 54)

वास्तव में स्त्री एक शक्ति है लेकिन समस्या यह है कि स्त्री अपनी शक्ति का सृजनात्मक प्रयोग नहीं कर रही है। आज के संसार को उनकी मदद की आवश्यकता है। आज की स्त्री अपनी शक्ति को ही समझ नहीं पा रही है, इसीलिए वह दुखी है। वह अपनी शक्ति का विज्ञापनों में, टी.वी. में, सिनेमा में, मैगजीनों में ह्रास कर रही है और सारा संसार उसका परिणाम भोग रहा है। स्त्री का जीवन व्यक्ति के खिलवाड़ के लिए नहीं है लेकिन आज की स्त्रियाँ इस बात को भूल गई हैं। बहुत सारी स्त्रियाँ आज भी अपनी प्रशंसा पाकर ही प्रसन्न होती हैं। वे चाहती हैं कि कोई उन्हें देखे और उनकी तारीफ करे। मैं पूछता हूँ कि तुम्हें इस चीज की क्या जरूरत पड़ी हुई है? तुम अपनी तारीफ के लिए दूसरों पर निर्भर क्यों हो? किसी विशेष प्रकार के कपड़े पहनने और फिर यह देखना कि कोई मेरी तारीफ करे और कहे कि आप बहुत सुन्दर लग रही हो। जीवन जीने का यह तरीका कोई अधिक प्रसंसा योग्य नहीं है और न ही यह भावी पीढ़ियों के लिए ही ठीक होगा। स्त्री एक माँ है यह दृष्टिकोण और इस प्रकार की निर्भरता ठीक नहीं है तथा यह भावी पीढ़ियों के लिए भी ठीक नहीं होगा। यदि हमें मानवता के लिए प्यार है तो हमें यह अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए।

सभ्यता की रक्षक - स्त्री सबसे पहली शिक्षादायिनी है क्योंकि बच्चे आरम्भिक शिक्षा अपनी माँ से ही प्राप्त करते हैं। यदि माँ बच्चों को अच्छी तरह से रहने की शिक्षा नहीं देती है तो बच्चे बिल्कुल जंगली या असभ्य हो जाएँगे लेकिन आज की स्त्री तो स्वयं ही सुरक्षित नहीं है उसे तो स्वयं ही पता नहीं है कि वह कल को इस घर में रहेगी अथवा नहीं, इसी पति के साथ रहेगी या नहीं। जब रिश्ते ही पक्के न हों तो माँ, बच्चों को ज्ञान किस प्रकार से दे सकती है।

भारत में स्त्री की स्थिरता बनी रही, यह बात हमें अपनी विरासत को देखने से पता चलती है। वास्तव में भारत दो हजार सालों तक परदेशी राजाओं के अधीनस्थ रहा और उसने बेशुमार अत्याचारों को सहन किया। सबसे बाद का राजभाग अंग्रेजों का रहा जिनके प्रभाव स्वरूप यहाँ के बहुत सारे लोग बनावटी अंग्रेज बन बैठे। अंग्रेजों वाले कपड़े, पश्चिमी कपड़े, अंग्रेजी भाषा बोलनी आदि सब कुछ के होते हुए भी भारतीय संस्कृति व भारतीय सभ्यता बची रही। प्रत्येक चीज बिखर गई लेकिन संस्कृति बची रही। आज भारत की सारी पूँजी समाप्त हो चुकी है, गरीबी फैली हुई है, असमानता का वातावरण है, जनसंख्या वृद्धि बहुत अधिक है, पौष्टिक आहार की कमी है लेकिन सभ्यता बची हुई है और इस बात का सेहरा स्त्रियों के सिर पर ही जाता है।

आज से पचास वर्ष पहले पश्चिम में भी स्त्रियाँ ही सभ्यता की रक्षक थीं लेकिन यह कहना पड़ता है कि आज वे रक्षक नहीं हैं, आज वहाँ पर कोई संस्कृति नहीं है। आज के समाज में कोई भी प्रभावपूर्वक शिक्षा नहीं है। हम अपराधियों के लिए पाश्चाताप करवाते हैं, जो लोग निराश हैं उनके लिए चिकित्सा करते हैं लेकिन यह नहीं समझते हैं कि जीने की सर्वोत्तम शिक्षा तो बचपन में ही दी जाती है, इस प्रकार की शिक्षा कालेजों में अथवा विश्वविद्यालयों में नहीं दी जाती है। अच्छे नागरिक बनो, इस प्रकार के सिद्धान्त बचपन में ही सीखे जाते हैं। विश्वविद्यालयों की शिक्षा, कोई सच्ची शिक्षा नहीं है, यह तो केवल एक नकल है। यह शिक्षा न तो मन को ही सन्तुष्ट करती है और न ही यह दिमाग को सन्तुष्ट करती है। एक दूसरी शिक्षा है जो हम अपने मित्रों के द्वारा, पड़ोसियों के द्वारा व समाज के द्वारा प्राप्त करते हैं, वह है वातावरण के बारे में शिक्षा।

वातावरण को जानना व समझना भी आजकल बहुत

कम हो गया है क्योंकि नींव ही पक्की नहीं है, बच्चों की घर की शिक्षा ही पूरी नहीं है। शिक्षा की नींव तो बचपन में ही रखी जाती है और यह शिक्षा तो केवल माँ ही देती है। यदि हमारी बचपन की और परिवार की शिक्षा सृजानात्मक हो, उत्पादक हो तो मैं नहीं सोचता हूँ कि समाज के अन्दर कोई समस्या उत्पन्न नहीं हो सकती है। हमें समाज का पुनर्निर्माण इस प्रकार से करना पड़ेगा जो कि भावी पीढ़ियों की सुदृढ़ नींव बना सके।

हमने बहुत सारे मन्दिर, गुरुद्वारे व चर्च बनाए, शिक्षा की संस्थाएँ बनाईं लेकिन हम यह भूल रहे हैं कि वास्तव में सबसे पहली और सबसे जरूरी संस्था तो परिवार है। जब तुम परिवार को परे कर देते हो तो फिर तुम कभी भी खुश नहीं रह सकते हो। अपने मन की गहराई में जाकर देखो तो तुम वहाँ पर देखोगे कि सारी समस्याओं की जड़ परिवार में ही है। यदि हम परिवार की महत्ता को नहीं देखेंगे, उसकी सराहना नहीं करेंगे, उसके प्रति सतर्क नहीं होंगे तो फिर समाज चाहे बच जाए लेकिन हम केवल वहशी समाज का निर्माण कर रहे होंगे जिसे कि कुछ भी समझ नहीं होगी। अतः मेरी स्त्रियों के आगे हाथ जोड़ कर विनती है कि वह इस भाव को छोड़ दे कि वह उत्तम है या नहीं, वह परिवार को स्थापित करे, अपना जीवन पारिवारिक जीवन बनाए और सुन्दर परिवार का सृजन करे। इस प्रकार करके न केवल भावी पीढ़ी ठीक हो सकती है बल्कि बच्चे ठीक मार्ग पर चल सकते हैं।

योग तथा पारिवारिक जीवन

'योग' शब्द 'युग्म' से बना है जिसका अर्थ है जोड़ना या एकत्र करना। पृथक-पृथक प्रकार के जोड़ हैं। यदि तुम किसी धातु के दो सिरों को लेकर और उन्हें गर्म करके जोड़ो तो वह एक गोलाई की शक्ल बन जाती है। इसी प्रकार से जब एक मनुष्य, एक स्त्री के साथ विवाह करता है, तो वे एक दूसरे से अंगूठी का आदान-प्रदान करते हैं। यह रक्म इस बात की प्रतीक है कि वे दोनों अब एक हो गए हैं। ठीक इसी प्रकार से योग के अन्दर व्यक्ति सर्व व्यापक के साथ जुड़ता है। अतः 'विवाह' और 'योग' का लक्ष्य एक ही है और वह है जुड़ना, एकत्र होना तथा खुशी प्राप्त करनी। हम सभी इसीलिए यहाँ पर हैं क्योंकि हमने पूर्वजन्म में कोई न कोई गलती की है। हम अपनी हउमै के कारण ही ब्रह्मांड से टूटे हुए हैं और हम पुनः उसके साथ जुड़ सकते हैं और एकत्व प्राप्त कर सकते हैं। कोई बात नहीं यदि हम शारीरिक तौर पर पृथक हो गए हैं फिर भी हम मानसिक तौर पर तो जुड़ ही सकते हैं। जीवन के प्रत्येक पल के साथ या तो हम जुड़ रहे हैं और या फिर टूट रहे हैं। यही तो जीवन है, हम जुड़ने और टूटने से सीख सकते हैं।

जीवन जीने के दो ही मार्ग हैं एक है - 'त्याग' और दूसरा है 'पारिवारिक जीवन'। इन दोनों मार्गों में अन्तर केवल इतना है कि त्याग के मार्ग पर तुम्हें सोचने और समझने का समय अधिक मिल जाता है। जब मैं छोटा था और जब भी मुझे पर्वतों पर चलते-फिरते साधू मिल जाते थे तो मुझे बहुत ही अच्छा लगता था कि इनका जीवन भी कितना सरल जीवन है। कोई जिम्मेवारी नहीं, एक कम्बल, एक कोई बर्तन है, बस एक पर्वत से दूसरे पर्वत पर घूमते रहते हैं। उन्हें यह भी पता नहीं होता है कि वे रात्रि कहाँ पर बिताएँगे और वहाँ पर क्या खाएँगे। यदि देखा जाए तो वास्तव में 'त्याग' बहुत कठिन है। यही कारण है कि त्याग का मार्ग सबके लिए नहीं है। न ही यह कहा जा सकता है कि त्याग का मार्ग परिवार में रहने की अपेक्षा बहुत ऊँचा या अच्छा है। जब कोई साधू तुम्हारे पास आता है तो तुम सोचते हो कि वह तुमसे बड़ा और ऊँचा है लेकिन यदि तुम अपने पारिवारिक दायित्वों का निर्वाह पूरी तनदेही से कर रहे हो तो फिर वह साधू तुमसे बड़ा व ऊँचा नहीं है।

बहुत सारे लोगों का कर्तव्य त्याग नहीं है क्योंकि हम सत्य के साथ अन्य प्रकारों से भी जुड़ सकते हैं, जैसे कि अपना कार्य करके, अपनी ड्यूटी करके तथा जीवन के बारे में कुछ समझ कर। संसार में रहते हुए बहुत कुछ करने के तरीके हैं, हम उनमें से कुछ भी कर सकते हैं और अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। दोनों मार्गों में पहली बात है - तुम्हारा लक्ष्य। दरअस्ल हम बहुत कुछ जानते हुए भी कुछ नहीं जानते हैं, हमने जो कुछ भी पढ़ा है वह हमें अपने मार्ग से दूर कर देता है, हटा देता है। हम परमात्मा की बातें तो बहुत करते हैं लेकिन परमात्मा के बारे में कुछ भी जानते नहीं हैं।

'चलता'

(पृष्ठ 52 का शेष)

देनहार परमात्मा ने धर्म की पुकार को सुनकर श्री गुरू नानक देव जी को संसार में भेजा और गुरू जी ने चरणामृत अपने सिक्खों को पिलाया भावार्थ उन्होंने अपने सिक्खों को नम्रता और भक्ति सिखाई तथा संसार को अनेक पूजाएँ करने के ढंग से बाहर निकाल कर एक पारब्रह्म परमात्मा पर दृढ़ किया। इस प्रकार से आपने धर्म के चारों पैरों और चारों वर्णों को एक किया अर्थात आपने धर्म के सारे अंग सिखलाए और राजा व रंक को समान जानना तथा पैरों में पड़ना जन साधारण को सिखाया। परमात्मा का उल्टा कौतक देखो कि आपने पैरों के ऊपर सिर को झुका दिया यानि कि लोगों को झुकने की बुद्धि प्रदान की। जिस प्रकार से सिर ऊँचा है लेकिन उसे पैरों पर झुका दिया। इस तरह से सतिनाम के मन्त्र के द्वारा का बाबा जी ने उद्धार कर दिया। दरअस्ल श्री गुरू नानक देव जी कल्युग का उद्धार करने के लिए ही आए थे भावार्थ ग्लानि भाव के समस्त आधारों को दूर करके गुरू नानक देव जी ने प्रेम-भक्ति एक वाहिगुरू, मनुष्यों के अन्दर विनम्र भाव, पारस्परिक प्यार तथा धर्म को धारण करना सिखा दिया और इस प्रकार से आपने दुखी संसार को दवा प्रदान की।

अब अगली पउड़ी में तपस्या किस प्रकार से लेखे में पड़ती है, इस सम्बन्ध में बतलाया गया है, यानि कि तपस्या को पूर्णरूपेण स्पष्ट किया गया है।

'चलता'

रतवाड़ा साहिब में महापुरुषों के प्रवचनों का कार्यक्रम

प्रत्येक रविवार रतवाड़ा साहिब - 12.00 बजे से 4.00 बजे तक

पूर्णमाशी - 16 जुलाई, दिन मंगलवार।

संक्रान्ति - सावणि, 16 जुलाई, दिन मंगलवार। (प्रातः 5.30 बजे से 8.00 बजे तक)

अमृत संचार - महीने के प्रथम रविवार को गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब में सुबह 11.00 बजे होता है।

INTERNET MEDIA AND LIVE TELECAST

Website : www.ratwarasahib.in
Website : www.ratwarasahib.org
Instagram : RATWARA SAHIB (https://instagram.com/ratwara.sahib/)
You Tube : https://www.youtube.com/user/babalakhbirsingh
Facebook : https://www.facebook.com/ratwarasahib1
Twitter : https://mobile.twitter.com/ratwarasahib13
Live Audio Link 1 - https://www.awdio.com/Ratwara Sahib
Live Audio Link 2 - https://mixlr.com/ratwara-sahib
E-mail :- sratwarasahib.in@gmail.com

Contact - 9569455861, 9417912900, 9814612900

आवश्यक निवेदन

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यिूवल या दसवंद पंजाब एंड सिंध बैंक की किसी भी शाखा द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में भेजी जा सकती है।

भारत (INDIA)

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यिूवल भेजने के लिए -

VGRMCT / Atam Marg Magazine
S/B A/C No. 12861000000003 RTGS/IFSC Code - PSIB0021286
Branch Code - C1286

दसवंद भेजने के लिए -

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
SB A/C No. 12861100000005 RTGS/IFSC Code - PSIB0021286
Branch Code - C1286

विदेश (ABROAD)

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
Punjab National Bank SB A/C No. 0779000100179603
RTGS/IFSC Code - PUNB0077900 Branch Code - 077900

यदि चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा राशि भेजनी हो तो ऊपरलिखित खातों अनुसार **Gurdwara Ishar Parkash Ratwara Sahib, P.O. Mullanpur Garibdas. Distt S.A.S. Nagar (Mohali) - 140901** पर भेजने की कृपा करें। यदि **Online** राशि भेजनी हो तो राशि की जानकारी देते समय अपना नाम व पूरा पता मोबाइल नं. +91-98889-10777 पर **SMS** भेजें जी।

सर्व साधारण को सूचित किया जाता है कि यदि आपने अभी तक आत्म मार्ग मासिक पत्रिका की सदस्यता ग्रहण नहीं की है तो आप कृप्या अधोलिखित प्रारूप पत्र को भरकर सदस्यता ग्रहण करने की कृपा करें। यदि आप पहले से ही सदस्यता ग्रहण कर चुके हैं, तो पुनर्नवीनीकरण हेतु इस प्रारूप पत्र के साथ आवश्यक चैक/ड्राफ्ट "VGRMCT/ATAM MARG MAGAZINE" के नाम पर प्रेषित करने की कृपा करें।

Subscription form ✓ ☐ नई सदस्यता ☐ पुनर्नवीनीकरण ☐ आजीवन सदस्यता

within India

Subscription Period	By Ordinary Post/Cheque
1 Year	Rs. 300/320
3 Year	Rs. 750/770
5 Year	Rs. 1200/1220
Life	Rs 3000/3020

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 £
Europ	50 Euro	500 Euro
Australia	80 Aus $	800 Aus $

जनवरी ☐ फरवरी ☐ मार्च ☐ अप्रैल ☐ मई ☐ जून ☐ जुलाई ☐ अगस्त ☐ सितम्बर ☐ अक्तूबर ☐ नवम्बर ☐ दिसम्बर ☐

नाम/Name पता/Address.....

.....

.....Pin Code..... Phone ..... E-mail :.....

सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल, रतवाड़ा साहिब

समय - सुबह 9.30 बजे से 2.00 बजे तक (रविवार से शुक्रवार)
डाक्टरों का समय - सुबह 10.00 बजे से 12.00 बजे तक
दूरभाष नं. 98786-95178, 92176-93845

डा. का नाम	विशेषज्ञ	दिन
1. डा. जसबीर कौर	जनरल मैडिसन	सोमवार
2. डा. गुरिंदर कौर कंग	एम. डी. (गाइनी)	सोमवार
3. डा. कुलदीप सिंह कंग	एम. डी. (आँखों के विशेषज्ञ)	सोमवार
4. डा. हरबंस सिंह	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	मंगलवार
5. डा. तेजिंदर सिंह	जनरल मैडिसन	मंगलवार
6. श्री माइकल जी	एक्स-रे विशेषज्ञ	मंगलवार तथा वीरवार
7. डा. जे. एस. गुजराल	जनरल मैडिसन/शिशु रोग विशेषज्ञ	मंगलवार तथा वीरवार
8. डा. आर. एस. संधू	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	वीरवार
9. डा. संतोष अनेजा	जनरल मैडिसन	वीरवार
10. डा. एस. के. बांसल	जनरल मैडिसन	शुक्रवार
11. डा. बरिन्दर सिंह	जनरल मैडिसन तथा त्वचा रोग विशेषज्ञ, एअरो स्पेस मैडिसन	शुक्रवार
12. डा. जिंदल	जनरल मैडिसन	रविवार
13. डा. गुरप्रीत कौर गिल	होम्योपैथिक	बुद्धवार
14. डा. कुलदीप कौर	दाँतों के विशेषज्ञ	मंगलवार

-: लैबोरेटरी टैस्ट तथा अन्य सुविधाएँ :-

1. खून टैस्ट, 2. सारे खून सैल काउंट टैस्ट 3. ब्लड शुगर टैस्ट, 4, किडनी टैस्ट, 5. लीवर टैस्ट, 6. लिपिड परोफाइल टैस्ट, 7. थायराइड टैस्ट, 8. हिमोग्लोबिन टैस्ट, 9. पेशाब टैस्ट, 10. स्टूल टैस्ट, 11. ई.सी.जी., 12. एक्स-रे (क्ष-किरण)

सारे लैबोरेटरी टैस्ट आधे शुल्क पर किये जाते हैं तथा मरीज को दवाई मुफ्त दी जाती है।

प्रत्येक रविवार को अस्पताल खुला रहेगा। समय 11.00 से 1.00 बजे तक। प्रत्येक शनिवार को अस्पताल बन्द रहेगा।

विश्व गुरमत रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट

के मुख्य संस्थापक प्यारे महापुरुष सन्त बाबा वरियाम सिंह जी द्वारा लिखित व प्रकाशित पुस्तकें

यह पुस्तकें श्री गुरू ग्रन्थ साहब जी के गूढ़ सिद्धान्तों को सरल रूप में स्पष्ट करके जिज्ञासुओं के समक्ष प्रस्तुत करती हैं। इनकी विषय वस्तु के रूप में नाम, सेवा व स्मरण की विधियों को प्रस्तुत करते हुए जन साधारण की भाषा का अत्यन्त सरल, मार्मिक व हृदयस्पर्शी प्रयोग किया गया है। यह दुर्लभ पुस्तकें, प्रत्येक जिज्ञासु व साधक के लिए एक अमूल्य निधि के रूप में हैं। अध्यात्मिक सुख व शान्ति प्राप्त करने हेतु आप इन्हें प्राप्त करके स्वयं पढ़ें तथा अन्य श्रद्धालुजनों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। यह सभी पुस्तकें गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहब में आपकी सेवार्थ उपलब्ध हैं -

हिन्दी	
1. सुरति शबद मार्ग	70/-
2. किव कुड़ै तुटै पालि	35/-
3. बात अगंम की - सात भागों में	400/-
4. किव सचिआरा होइए - भाग पहला	35/-
5. किव सचिआरा होइए - भाग दूसरा	65/-
6. किव सचिआरा होइए - भाग तीसरा	100/-
7. होवै आनन्द घणा	30/-
8. बाबाणियाँ कहानियाँ	50/-
9. सुरतिआं उपजै चाउ	40/-
10. सर्व प्रिय गुरू गोबिंद सिंह जी	10/-
11. भक्त प्रहलाद	10/-
12. अमृत फुहार	10/-
13. अगम अगोचर का मार्ग	70/-
14. जपुजी साहिब सटीक	15/-
15. अमर ज्योतियाँ	15/-
16. अमर गाथा	100/-
17. वैशाखी	10/-
18. साजन चले प्यारिआ	10/-
19. अविनाशी ज्योति - भाग 1	90/-
20. रूहानी गुलदस्ता	70/-
21. चउथै पहरि सबाह कै	60/-

English Version	Price
1. Baisakhi	Rs. 5/-
2. How Rend The Veil of Untruth	Rs. 70/-
C. Discourses on the Beyond -1	Rs 50/-
4. Discourses on the Beyond -2	Rs. 50/-
5. Discourses on the Beyond -3	Rs. 50/-
6. Discourses on the Beyond -4	Rs. 60/-
7. Discourses on the Beyond -5	Rs. 60/-
8. The way to the imperceptible	Rs. 80/-
9. The Lights Immortal	Rs. 20/-
10. Transcendental Bliss	Rs. 70/-
11. How to Know Thy Real Self-(Vol-1)	Rs. 80/-
12. How to Know Thy Real Self-(Vol-2)	Rs. 80/-
13. How to Know Thy Real Self-(Vol-3)	Rs. 110/-
14. The Dawn of Khalsa Ideals	Rs. 10/-
15. A Glimpse of His Holiness - Baba ji	Rs. 5/-
16. Divine Word Contemplation Path	Rs. 150/-
17. The Story of Immortality	Rs. 260/-
18. Why not Contemplate the Lord	Rs. 200/-

ऊपरलिखित पुस्तकें आप जी मनीआर्डर, चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा रतवाड़ा साहिब से मंगवा सकते हैं या ट्रस्ट के अकाउंट में राशि जमां करवा कर मोबाइल नं. 9417214391, 9592009106, 9417214379 पर सूचित कर सकते हैं। **Bank Name : Pb & Sind Bank, A/c Name. VGRMCT/Atam Marg Magazine, S/B A/C No. 12861000000003, RTGS/IFSC Code - PSIB0021286, Branch Code - C1286**

प्यारे महापुरुषों के जन्म दिवस सम्बन्धी 17 जून को
रतवाड़ा साहिब में आयोजित किए गए गुरमति समागम के अनुपम दृश्य - तस्वीरों के माध्यम से

परम सम्माननीया ब्रह्मलीन सन्त माता रणजीत कौर जी
रतवाड़ा साहिब वालों के जन्म दिवस सम्बन्धी

गुरमति
रूहानी समागम
8 अगस्त

समयः प्रातः 10.00 बजे से
सायं 4.00 बजे तक

सन्त माता रणजीत कौर जी
रतवाड़ा साहिब

रतवाड़ा साहिब

आत्म मार्ग के समस्त पाठकगणों तथा संगत को पहुँचने के लिए हार्दिक निवेदन

अत्यन्त आवश्यक निवेदन

आत्म मार्ग एक विशुद्ध धार्मिक पत्रिका है, इसमें धन्य श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी महाराज की वाणी प्रकाशित की गई होती है तथा सिक्ख इतिहास से सम्बन्धित गुरुओं व गुरसिक्खों की फोटोएँ होती हैं, इसलिए कृप्या इसे रद्दी कागज के तौर पर न तो प्रयोग में लाया जाए और न ही बेचा जाए। यदि आप पुरानी पत्रिकाओं को अपने पास नहीं रखना चाहते हैं तो आप उसे अपने रिश्तेदार या मित्र को दे सकते हैं या फिर अपने गाँव अथवा शहर के गुरुद्वारा साहिब की गोलक पर रख सकते हो ताकि वहाँ से कोई गुरुमुख प्यारा उसे वहाँ से ले जाकर उसके माध्यम से गुरमति रूहानी मार्ग दर्शन हासिल कर सके। इस प्रकार से तुम्हारा भी भला हो जाएगा। यदि ऐसा कर पाना सम्भव न हो तो जो प्रेमीपुरुष आपके घर इस पत्रिका को पहुँचाने की सेवा करता है उसके पास सम्पर्क करके आप उसे भी इन पत्रिकाओं को दे सकते हैं अथवा अधोलिखित सम्पर्क नम्बरों पर सम्पर्क करके आप सीधे आत्म मार्ग के कार्यालय में भी इन पत्रिकाओं को भेज सकते हो –

9417214391, 8437812900